RNI Reg. No. HARHIN/2015/63352

पशुधन ज्ञान

वर्ष : 8 | अंक : 01 | जनवरी, 2022 | अर्धवार्षिक, हिसार | For Free Circulation only

प्रकाशक
विस्तार शिक्षा निदेशालय
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय
हिसार – 125004 (हरियाणा)

AHC

गाय और भैंस का दूध बढ़ाने के लिए मिनिरल मिक्सर

Nutri-Diet

Vet. Mineral Mixture

✓ ज्यादा दूध ✓ ज्यादा फैट ✓ ज्यादा एस.एन.एफ.

- दुधारू पशुओं में अतः कृमियों के संक्रमण एवं थनेला रोग से बचाव।
- दुधारू पशु से सम्पूर्ण दूध निकालने एवं जल्दी पावसने में सहायक।
- पाचन क्षमता बढ़ाकर अधिक दुग्ध उत्पादन एवं फैट प्रतिशत को सुनिश्चित करता है।
- पशु चारे में उपलब्ध आवश्यक तत्वों को अवशोषित कर दुग्ध उत्पादन में वृद्धि।
- दुग्ध उत्पादन के साथ गर्भाशय की कार्य क्षमता को भी बढ़ाता है।

flipkart.com

सभी मेडीकल स्टोर पर उपलब्ध, फोटो मिलाकर खरीदें

अधिक दूध - अधिक आय - स्वस्थ पशु

Pack of 1kg. 5kg. 25kg.

More Information Contact No. 8059537000, 9896957711

डॉ. विनोद कुमार वर्मा
कुलपति
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं
पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

संदेश

हरियाणा कृषि प्रधान राज्य होने के साथ-साथ देश का अग्रणी पशुपालक राज्य भी है। कृषि एवं संलग्न क्षेत्रों में, पशुपालन क्षेत्र का आर्थिक विकास में योगदान सबसे ज्यादा है। आज के बदलते आर्थिक परिवेश में उच्च प्रोटीन युक्त आहार की मांग बढ़ रही है जिसे पूरा करने के लिए पशुपालन क्षेत्र पर निर्भरता बढ़ती जा रही है। साथ ही साथ किसानों की आय दोगुनी करने में भी पशुपालन क्षेत्र की अहम भूमिका है। बढ़ती जनसंख्या के कारण कम होती कृषि जोत ने पशुपालन को अत्याधिक प्रासंगिक बना दिया है।

हरियाणा राज्य देश के दुग्ध उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इसके साथ-साथ मांस उत्पादन, अंडा उत्पादन, मछली पालन व पशुपालन से जुड़े अन्य व्यवसायों में भी काफी वृद्धि हो रही है।

लुवास अपने वैज्ञानिक शोधों के द्वारा हमेशा से पशुओं की उत्पादक क्षमता बढ़ाने, उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ाने और बीमारियों से बचाव जैसे विषयों पर नवीनतम जानकारियों एवं तकनीकों को पशुपालकों तक पहुँचाने का कार्य कर रहा है।

विस्तार शिक्षा निदेशालय द्वारा प्रकाशित 'पशुधन ज्ञान' पत्रिका वैज्ञानिकों, बुद्धिजीवियों एवं पशुपालकों को ज्ञान के माध्यम से जोड़ने का कार्य करती है। लुवास एवं अन्य क्षेत्रों में होने वाले पशुओं से संबंधित शोध कार्यों को विस्तार शिक्षा निदेशालय के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाने का कार्य किया जाता है। पशुधन ज्ञान पत्रिका के प्रकाशन के अवसर पर विस्तार शिक्षा निदेशक एवं पत्रिका के संपादक एवं वैज्ञानिकों को बधाई देता हूँ एवं आशा करता हूँ कि पत्रिका अपने उद्देश्य में सफल हो।

(विनोद कुमार वर्मा)

डॉ. धर्मवीर सिंह दहिया
निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय,
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं
पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

संदेश

ग्रामीण क्षेत्रों में पशुपालन सामाजिक एवं आर्थिक बदलाव का महत्वपूर्ण अंग है। पशुपालन प्राचीन काल से ही हमारे जीवन का अभिन्न अंग है। पशुधन हमें खाद्य उत्पादों के अलावा रोजगार तथा खेती के कार्यों के लिए ऊर्जा, खाद्य आदि उपलब्ध करवाता है। दुग्ध उत्पादन का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में गेहूँ, धान और गन्ना जैसे प्रमुख पदार्थों से भी ज्यादा हिस्सा है।

हरियाणा पूरे भारतवर्ष में दुग्ध उत्पादन में अग्रणी राज्यों में से एक है एवं प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता में पंजाब के बाद दूसरे स्थान पर है। पशुधन में उच्चतर उत्पादों की प्राप्ति के लिए संतुलित आहार, नस्ल सुधार, बेहतर स्वास्थ्य तथा बीमारियों का नवीनतम तकनीक द्वारा निदान और इलाज आदि ऐसे प्रांसगिक विषय हैं जिनकी जानकारी पशुपालकों तक समय-समय पर पहुंचाना अति आवश्यक है। राज्य में कुल दुग्ध उत्पादन का लगभग 84 प्रतिशत हमें भैंसों एवं 15 प्रतिशत गायों से प्राप्त होता है। राज्य एवं देश की बढ़ती जनसंख्या, खाद्य सुरक्षा एवं संतुलित आहार के प्रति जागरूकता को ध्यान में रखते हुए पशुपालन क्षेत्र में रोजगार की अपार संभावना है। ग्रामीण क्षेत्रों में युवाओं में डेयरी, मत्स्य पालन, सुअर पालन, मुर्गी पालन एवं भेड़-बकरी पालन में बढ़ती रूचि एवं रोजगार की संभावनाओं को ध्यान में रखकर विस्तार शिक्षा निदेशालय पशुधन के विकास से सम्बन्धित नवीन जानकारियों एवं तकनीकों को पशुधन ज्ञान पत्रिका के माध्यम से पशुपालकों तक पहुंचाने का कार्य करता है।

हरियाणा प्रदेश ने पशुपालन के क्षेत्र में बहुत तरक्की की है जिसमें प्रदेश के पशु वैज्ञानिकों और पशुपालक किसानों का बहुत बड़ा योगदान है। अब विस्तार शिक्षा निदेशालय द्वारा प्रकाशित 'पशुधन ज्ञान' पत्रिका का वर्ष 2020 का द्वितीय अंक पशुधन व पशु उत्पाद से संबंधित सूचनाएं और ज्ञान पशुपालकों के घर-घर तक पहुंचाने का कार्य करेगा। मैं विश्वविद्यालय के सभी वैज्ञानिकों और अधिकारियों का धन्यवाद करता हूँ एवं पशुपालकों के लिए किए जाने वाले इस प्रयास की सराहना करता हूँ।

(धर्मवीर सिंह दहिया)

सम्पादक की कलम से...

पशुपालक भाइयों आज के समय में पशुपालन एक उद्यम का रूप ले चुका है। पशु उत्पादों जैसे दूध, दही, लस्सी आदि की मांग दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। ऐसे में पशुपालक एक उद्यमी की तरह सोच रखकर पशुपालन व्यवसाय से अधिकतम लाभ ले सकते हैं। बदलते परिवेश में पशुओं में नए–नए प्रकार के रोग एवं समस्याएं हो रही है। ऐसे में हमें पशुपालन संबंधी नवीन जानकारी एवं तकनीकों के बारे में अवगत होते रहना चाहिए।

पशुपालकों को सरल एवं आसान भाषा में यह जानकारी पशुधन पत्रिका के माध्यम से दी जा रही है। हमारा उद्देश्य है कि पशुपालक पारंपरिक ज्ञान के साथ–साथ वैज्ञानिक विधि की भी जानकारी रखें एवं जरूरत पड़ने पर उसका उपयोग करें।

पशुधन ज्ञान की पत्रिका में पशुपालन में लाभदायक सिद्ध होने वाली हाइड्रोपोनिक्स, ड्रमसाइलेज जैसे आधुनिक जानकारियों से साथ–साथ मिलावटी दूध की पहचान, विभिन्न मौसमों में पशुओं की देखभाल, घातक बीमारियों से बचाव, गर्भकाल में पशुओं की देखभाल आदि विशयों पर बहुत सी नवीन जानकारी दी गई है। पशुपालकों से निवेदन है कि इसमें बताई गई दवाइयों से संबंधित जानकारी का उपयोग करने से पहले पशु चिकित्सक की सलाह अवश्य लें।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह पत्रिका पशुपालकों एवं अन्य बुद्धिजीवियों के लिए लाभप्रद सिद्ध होगी। मैं इस पुस्तिका के नवीन अंक के प्रकाशन पर कुलपति लुवास, विस्तार शिक्षा निदेशक, वैज्ञानिकगण एवं सम्पादक मंडल के सदस्यों का धन्यवाद ज्ञापन करता हूँ।

(देवेन्द्र सिंह)

विषय सूची

क्र.सं.	विषय	लेखक	पृष्ठांक
1.	भारतीय एवं यूरोपीयन गायों में तुलनात्मक अंतर	के.एल. दहिया, जसवीर सिंह पंवार एवं प्रेम सिंह	1
2.	डेयरी हेतु उपयुक्त भवन निर्माण	चेतन सिंह	3
3.	गाय व भैंस में ताव (मद) के लक्षणों की पहचान	कुसुमलता झाझड़िया, अमित कुमार एवं पूजा	5
4.	बकरियों में टीटफिस्टुला की समस्या, निदान व उपचार	अमित सांगवान, गरिमा चौधरी एवं राजेन्द्र यादव	8
5.	बछियों का प्रबन्ध	कमलदीप, अनीता दलाल एवं अनिका मलिक	10
6.	फार्म विवरण का महत्त्व	कमलदीप, अनिका मलिक एवं अनिता दलाल	11
7.	उत्तम सांड का चयन	कमलदीप, अनिका मलिक एवं सरिता	11
8.	लम्पी स्किन डिजीज (एलएसडी / ढेलेदार / गांठदार त्वचा रोग)	दिव्या अग्निहोत्री, स्नेहलता चौहान एवं शालिनी शर्मा	12
9.	भेड़–बकरियों में मुख्य विषाणुजनित रोग एवं उनकी रोकथाम	रिक्की झाँभ, राजेन्द्र यादव और युधवीर सिंह	13
10.	पारंपरिक पशुचिकित्सा पद्धतियां	राजेंद्र यादव, पंकज कुमार, देवेंद्र सिंह एवं अमित सांगवान	15
11.	बरसीम–सर्दियों की एक पौष्टिक चारा फसल	सतपाल, रवीश पंचटा एवं सत्यवान आर्य	18
12.	नवजात पशुओं में काफस्कोर (सफेद दस्त)	वंदना भनोट, पवनजीत सिंह चीमा एवं देवेन्द्र सिंह	20
13.	शुष्क क्षेत्र में मारवाड़ी नस्ल की बकरी का पालन	निष्ठा यादव, मंजू नेहरा और प्रकाश	21
14.	पशुकल्याण : एक परिचय	अमनदीप, दिपिन चंद्र यादव और देवेंद्र सिंह बिढाण	22
15.	पशुओं के आहार में नमक का महत्व	रेणु कुमारी, संजय सिंह, गीतेश मिश्र	24
16.	मनुष्य में पशुओं से होने वाले दूधजनित रोग व उनसे बचाव	वंदना भनोट, पल्लवी मुदगिल व स्वाति रूहिल	26
17.	गाय एवं भैंसों में अंडाशय में फॉलिक्युलर सिस्ट का बनना	सुजाता, ऊषा यादव एवं रवि दत्त	27
18.	कटड़ियों एवं बच्छियों में यौवनावस्था से गर्भ जाँच तक देख–रेख	सुखबीर रावीश, रविदत्त एवं संदीप कुमार	29
19.	कृत्रिम गर्भाधान (एआई)– सहायक प्रजनन प्रौद्योगिकी	अमित कुमार, ज्ञान सिंह एवं संदीप कुमार	31
20.	बकरी पालन की महत्वता	ज्योति शुन्थवाल, देवेन्द्र सिंह, राहुल यादव	36
21.	कुक्कुट प्रजातियों में कृत्रिम गर्भाधान	पूनम रतवान, डी.एस. दलाल, मनोज कुमार, ए.एस. यादव	37
22.	पशुओं में यूरिया और क्रिएटिनिन के मान में उतार चढ़ाव के शारीरिक एवं रोग सम्बन्धी कारण	शालिनी शर्मा, दिव्या अग्निहोत्री एवं अमित कुमार	39
23.	भेड़–बकरियों में मुख्य जीवाणुजनित रोग एवं उनकी रोकथाम	रिक्की झाँभ, जय भगवान और युधवीर सिंह	41
24.	औषधीय पौधों का कुक्कुट पालन में महत्त्व	अमनदीप, दिपिन चंद्र यादव और देवेंद्र सिंह बिढाण	43
25.	बायपास प्रोटीन और डेयरी पशुओं में इसका अनुप्रयोग	संदीप कुमार, अनुज सिंह एवं रामस्वरूप	45
26.	बकरियों को होने वाले मुख्य रोग, उनकी पहचान एवं उपचार कैसे करें?	अनुज सिंह, सन्दीप कुमार एवं रामस्वरूप	48

भारतीय एवं यूरोपीयन गायों में तुलनात्मक अंतर

के.एल. दहिया[1]*, जसवीर सिंह पंवार[2] एवं प्रेम सिंह[3]

[1]पशु चिकित्सक, [2]उपमण्डल अधिकारी, [3]उपनिदेशक, पशुपालन एवं डेयरी विभाग, हरियाणा

वर्तमान की गाय प्रजाति एक जंगली प्राणी के रूप में मानव निर्माण के करोड़ों वर्ष पूर्व प्रकृति में विकसित हुई है। भारतीय उपमहाद्वीप में पायी जाने वाली देशी गाय और यूरोप की जर्सी, हॉलस्टीन इत्यादि गायों का मूल 1.5 लाख वर्ष पहले एक ही (बॉस जेनरा) था। 1.5 लाख वर्ष पहले पृथ्वी पर अकस्मात् प्राकृतिक एवं भौगोलिक घटनाएं घटी जिससे वायुमण्डल में तेजी से बदलाव आया और परिणाम स्वरूप बॉस जेनरा के शरीर में भी आनुवंशिक रचना में अन्तर्भूत बदलाव आया जिसके परिणाम स्वरूप बॉस टॉरस – यूरोपीयन गाय, बॉस इंडिकस– भारतीय गाय और बॉस ग्रुन्नियंस– याक इत्यादि तीन प्रकार के पशुओं की व्युत्पत्ति हुई। बेशक, पहाड़ी क्षेत्रों में याक के दूध का उपयोग पेय पदार्थ के रूप में किया जाता है लेकिन याक को गाय की श्रेणी में नहीं रखा गया है। भारत सहित उष्णकटिबंधीय देशों में अधिकांश स्वदेशी पशु जेबू प्रजाति के हैं। दक्षिणी तुर्कस्तान में अनान की एक जगह पर पशुओं के पालतूकरण के शुरूआती प्रमाण पाये गये हैं, जहाँ पर बॉस नोमाडिकस तरह के गौवंश को लगभग 8000 ईसा पूर्व पालतू बनाया गया था।

भारतीय गाय, यूरोपीयन गाय एवं याक, इन तीनों में कभी कोई भी समानता नहीं रही है और समय बीतने के साथ–साथ तीनों अलग–अलग प्राणी बन गए हैं। देशी गाय, जेबू जबकि यूरोप में पायी जाने वाली गाय टॉरस प्रजाति का प्राणी है। भारतीय उपमहाद्वीप की गाय व यूरोप की गायों में निम्नलिखित अन्तर देखने को मिलते हैं :

1- 'kkjhfjd vk—fr % भारतीय उपमहाद्वीप की गायों का अगला हिस्सा चौड़ा होता है जबकि यूरोपीयन गाय के पुट्ठे चौड़े होते हैं।

2- fl j dk Åckj % भारतीय उपमहाद्वीप की लगभग सभी गायों के सिर के ऊपर सींगों के बीच में सिर पर ऊबार होता है जबकि यूरोपीयन गायों में यह समतल होता है।

3- vk[k % भारतीय गायों की आँखें ऊबरी हुई नहीं होती हैं जबकि यूरोपीयन गायों की आँखें थोड़ी बाहर निकली हुई होती हैं।

4- lhx % भारतीय उपमहाद्वीप में पायी जाने वाली गायों के सींग आकार में बड़े व भिन्न–भिन्न प्रकार के होते हैं जबकि यूरोपीयन गायों के सींग छोटे आकार के होते हैं।

5- dku % देशी गायों के कान बड़े व लटकते हुए जबकि यूरोपीयन गायों के छोटे व गोलाई लिये हुए होते हैं।

6- xydEcy % देशी गायों में गर्दन के नीचे गलकम्बल पूरी तरह विकसित जबकि यूरोपीयन गायों में अनुपस्थित या बहुत कम विकसित होता है।

7- <k.B % देशी गायों में कंधे के ऊपर पूरी तरह विकसित ढाण्ठ होती है जबकि यूरोपीयन गायों में अनुपस्थित या बहुत कम विकसित होती है।

8- l|.Mh % अधिकतर भारतीय मूल की नस्लों की गायों में पेट के नीचे सुण्डी की चमड़ी ढीली होती है जबकि यूरोपीयन गायों में यह अनुपस्थित या बहुत कम विकसित होती है।

9- i|N % देशी गायों की पूँछ जमीन की छूती लंबी होती है जबकि अधिकतर यूरोपीयन गायों की पूँछ आमतौर पर घुटने तक ही होती है।

10- [kqj % देशी नस्ल की गायों के खुर सीधे एवं नस्लानुसार छोटे से बड़े आकार के होते हैं जबकि यूरोपीयन नस्ल की गायों में ऐसी कोई भिन्नता दिखायी नहीं देती है।

11- y:oVh % भारतीय उपमहाद्वीप की गायों की लेवटी शरीर के साथ कसकर जुड़ी हुई होती है जबकि यूरोपीयन नस्ल की गायों की लेवटी शरीर के साथ ढीली सी जुड़ी हुई होती है।

12- Loj rU=% देशी नस्ल की गायों का स्वर तन्त्र यूरोपीयन गायों की तुलना में पूरी तरह विकसित होता है और भारतीय संस्कृति के अनुसार देशी गायों का स्वर मन को लुभावने वाला होता है।

13- Ropk % देशी गायों की त्वचा यूरोपीयन नस्ल की

*Corresponding author: drkldahiya@hotmail.com

भारतीय गाय

यूरोपीयन गाय

याक

गायों की तुलना में अधिक लचीलापन होता है।

14- 'kjhj ij cky% देशी नस्ल की गायों के शरीर पर कम सघन एवं पतले रोयेदार बाल होते हैं जबकि यूरोपीयन गाय के षरीर पर अपेक्षाकृत ज्यादा बाल होते हैं।

15- i lhus dh xzfFk;k% देशी गायों की त्वचा में पसीने की ग्रन्थियाँ ज्यादा एवं बड़ी होती हैं जबकि यूरोपीयन नस्ल की गायों में बहुत कम ग्रन्थियाँ होती हैं।

16- vkar% यूरोपीयन नस्ल की गायों की तुलना में भारतीय मूल की गायों की आंतों की लम्बाई ज्यादा होती है।

17- m".kh; lgu'khyrk% भारतीय उपमहाद्वीप की गायें उष्णीय तनाव के प्रति सहनशील जबकि यूरोपीयन नस्ल की गायों की उष्णीय सहनशीलता अच्छी नहीं होती है।

18- vknzrk ds çfr lgu'khy% भारतीय उपमहाद्वीप की गायों में यूरोपीयन गायों की तुलना में वातावरण की आर्द्रता के प्रति सहनशीलता बहुत अच्छी देखने को मिलती है।

19- fppMh çfrjks/kdrk% भारतीय नस्ल की गायों में यूरोपीयन गायों की तुलना में चिचड़ियों के प्रति अधिक सहनशीलता होती है।

20- jksx çfrjks/kdrk% यूरोपीयन गायों की तुलना में भारतीय गायों में विभिन्न प्रकार के रोगों के प्रति रोग प्रतिरोधकता अधिक पायी जाती है।

21- —f"k dk;l% भारतीय मूल की गायों के नर उष्णकटिबंधीय जलवायु में विभिन्न प्रकार के कृषि कार्यों के अनुकूल हैं जबकि विदेशीमूल की गायों के नरों का उपयोग कृषि कार्यों में कम किया जाता है।

22- thou fuokZg% देशी नस्ल की गायें कम पौष्टिक चारे पर भी गुजारा कर सकती हैं जबकि यूरोपीयन नस्ल की गायें कम पौष्टिक चारे पर गुजारा नहीं कर सकती हैं।

23- ikuh dh vko';drk% यूरोपीयन नस्ल की गायों को भारतीय गायों की तुलना में पीने के लिए ज्यादा पानी की आवश्यकता होती है।

24- mRiknd dky% भारतीय नस्ल की गायें अपने जीवन काल में 8–10 बार बच्चे को जन्म देकर दुग्ध उत्पादन करने में सक्षम हैं जबकि यूरोपीयन नस्ल की गायें केवल 4–6 बार ही दुग्धावस्था में आती हैं।

25- nqX/k dsflu% देशी गायों में पाये जाने वाला केसिन टाइप–2 का होता है जबकि अधिकतर यूरोपीयन गायों में यह टाइप–1 का होता है।

26- ekr`Ro% भारतीय नस्ल की गायें ममतामयी होती हैं इसलिए उनके बच्चे को उससे अलग करना मुश्किल होता है जबकि यूरोपीयन नस्ल की गायों के बच्चे को प्रसव के तुरन्त बाद माँ से अलग कर सकते हैं।

27- cSBus dh txg% यह भी देखने में आता है कि भारतीय मूल की गायें साफ–सुथरी जगह पर बैठती हैं जबकि यूरोपीयन नस्ल की गायें इस बारे में कोई परवाह नहीं करती हैं।

भारतीय और यूरोयिन मूल की गायों में अंतर चाहे जो भी हो लेकिन आज भारत में विदेशी मूल और उनके संकरण बहुतायत में पाये जाते हैं और उनकी संख्या में भी बढ़ोतरी हो रही है और उनका दूध का सेवन भी आमजन द्वारा निर्बाध रूप से किया जा रहा है। लेकिन, भारतीय उपमहाद्वीप की जलवायु में पैदा हुए देशी गौवंश को भी भविष्य के लिए बचाकर रखना अति आवश्यक है।

डेयरी हेतु उपयुक्त भवन निर्माण

चेतन सिंह

डिप्टी मैनेजर टेक्निकल सर्विसेस** विरबैक ऐनिमल हेल्थ इण्डिया प्रा. लि.

पिछले एक दशक से पशुपालन का व्यवसाय गाँव चौपालों की देहलीज लांघ कर शहरों में प्रविष्ठ हो चुका है। नवयुवकों का एक बड़ा तबका इस व्यवसाय की ओर आकृष्ट हुआ है।

बैंकों की उदारवादी ऋण नीति से भी संगठित डेयरी फार्म निरन्तर बढ़ रहे है। यद्यपि पारम्परिक पशुपालन में भवन निर्माण की इतनी अहमियत नही दी गई लेकिन अब साबित हो चुका है कि सफल दुग्ध उत्पादन के लिये आवास व्यवस्था उतनी ही जिम्मेदार है जितने की पोषण एवं चिकित्सा प्रबंधन जैसे अन्य तथ्य। यदि पशुपालक भाई पशुओं की आवास व्यवस्था में थोड़ा सा वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाकर भवन निर्माण करें तो दुग्ध उत्पादन का व्यवसाय फायदे मंद साबित हो सकता है। पशुओं के आवास निर्माण में पशुपालन को निम्न बिन्दुओं को ध्यान में रखकर अपनी आवश्यकताओं एवं पूंजी के अनुसार आवास व्यवस्था का प्रबंध करना चाहिए।

LFkku dk p;uko

पशुशाला ऊंची जगह पर होनी चाहिए। पशुशाला को उत्तम जल निकास वाली जगह पर बनाना अत्यन्त आवश्यक है यदि बड़ी पशुशाला बनानी है तो सड़क के किनारे बनाना चाहिए। इससे बाजार तक आने जाने में सुविधा होती है। दाना, चारा आदि बाजार से सरलता से लाया जा सकता है। दूध और अन्य दुग्ध पदार्थों को बाजार एवं उपभोक्ता तक पहुंचाने में आसानी होती है। पशुशाला में बिजली व पानी की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

i'k'kyk dk vkdkj

कम पशुओं के लिए छोटी व अधिक पशुओं के लिए बड़ी पशुशाला बनाई जा सकती है। पशुशाला दो प्रकार की होती है।

¼v½ ,d drkj okyh i'k'kyk

¼c½ nks drkjksa okyh i'k'kyk

*Corresponding author: chetan.singh@virbac.in

,d drkj okyh i'k'kyk

एक कतार वाली पशुशाला में एक ही कतार में पशु बांधे जाते है। यह पशुशाला 10–15 पशुओं के लिए अधिक रहती है। पशुशाला का निर्माण करते समय इन बातों का ध्यान रखें। चारा डालने का रास्ता–4 फुट, खाने की नांद–2.5 फुट, पशुओं के खड़े रहने की जगह 5.5 फुट, गोबर मूत्र की नाली–2 फुट, सफाई करने का रास्ता–8 फुट।

ykHk

- इस पशुशाला में पशुओं को पूरा आराम मिलता है।
- हवा का अच्छी तरह से आना जाना होता है।
- हर एक पशु को काफी जगह मिल जाती है।
- यह देखने से सुन्दर लगती है।

dfe;k

- ये पशुशालाएं अधिक स्थान लेती है
- इनकी बहुत ही जमीन बेकार पड़ी रहती है।
- इस पशुशाला में कम पशु रखे जाते है व अधिक जगह लगती है।
- इसमें खर्चा भी अधिक आता है।

nks drkjksa okyh i'k'kyk

इसमें पशु अधिक होने पर पशुओं को दो कतारों में बांधा जाता है अंतः जगह की काफी बचत होती है एवं निर्माण व्यय भी कम हो जाता है। दो कतारों वाली पशुशाला की चौड़ाई 32 फुट रखी जाती है। पशुओं को बांधने की पहली विधि में दोनो कतारों के पशुओं के सिर आमने सामने होते है, दूसरी विधि में पशुओं के सिर विपरीत दिशा में होते हैं।

fl j vkeus lkeus okyh fof/k& यदि इस विधि से पशुओं को बांधना है तो पशुशाला का निर्माण दिए गए विवरण के अनुसार करना चाहिए।

lQkbZ dk jkLrk& 4 फुट (दोनों दीवारों की ओर) गोबर **e=h ukyh&** 1.5 फुट पशुओं के खड़े रहने की जगह–5

फुट, खाने की नींद–2.5 फुट, चारा डालने का रास्ता–5 फुट।

ykHk

- एक ही आदमी, दोनो कतारों में चारा आदि डाल सकता है
- पशुशाला में प्रकाश रहता है।
- कम स्थान लगता है
- सामने से पशुओं के निरीक्षण में आसानी होती है।

dfe;k

- इस विधि में पशुओं को सांस की विभिन्न बीमारियों के होने का डर रहता है।

xkcj

- पेशाब से दीवालें गंदी हो जाती है।
- दूध निकालते समय, ग्वाले पर सही निगरानी नहीं रखी जा सकती है।
- सफाई करने में भी अधिक समय लगता है।

iwN ls iwN dh fof/k

इस विधि में पशुओं के सिर उल्टी दिशा में होते हैं। पशुओं का पिछला हिस्सा एक दूसरे के सामने रहता है। इसमें पशुओं को बांधने के लिए पशुशाला का निर्माण इस प्रकार करें।

pkjk Mkyus dk jkLrk& 4 फुट (दोनों दीवारों की ओर), खाने की नांद– 3 फुट, खड्डे रहने की जगह – 5 फुट, गोबर मूत्र नाली– 1 फुट, दूध निकालने व सफाई की जगह – 6 फुट (बीच में)

ykHk

- इस विधि में सफाई में आसानी होती है।
- इसमें सांस या छूत की बीमारी नहीं होती है।
- पशुओं को काफी जगह मिल जाती है। दो पशुओं के बीच 4 से 5 फुट की दूरी रहती है।
- दूध निकालते समय ग्वालों पर निगरानी रखी जा सकती है।
- बीच में जगह रहने से दूध ले जाने व सफाई करने में सुविधा रहती है।

gkfu;k

इस विधि में दूध निकालने के स्थान पर अंधेरा रहता है। सफाई करते समय पशु लात मार सकता है। दाना चारा डालने में अधिक समय लगता है। अंधेरा और सोलन कई प्रकार की बीमारियां को जन्म देता है। सूर्य का प्रकाश कई बीमारियों के कीटाणुओं का जन्म देता है। इसलिए गौशाला की खिड़की दरवाजे, छत, रोशनदान ऐसे हो कि सूर्य का प्रकाश गंदी हवा रहती है। इस गंदी हवा से बीमारी फैलने का डर रहता है। पशुषाला में ताजी हवा के लिए दीवारों की ऊपरी और जालियां होनी चाहिए।

चूंकि भवन की सारी संरचना फर्श पर टिकी होती है। अंतः पशुशाला की फर्श के निर्माण पर भी ध्यान देना चाहिए। कच्चा फर्श जल्दी खुरदरा हो जाता है कच्चे फर्श की ठीक से सफाई नहीं हो पाती है। सीमेंट का खुरदरा फर्श सबसे अच्छा होता है। फर्श का ढाल पशुओं की नांद से मूत्र नालियों की तरफ होना चाहिए। इससे मूत्र आदि सरलता से नाली बहकर जा सकें। ढालकर फर्श को धोने में भी सरलता रहती है। फर्श में फिसलन नहीं होना चाहिए। गौशाला से उत्सर्जी पदार्थों तथा गोबर मूत्र के निकास की उचित व्यवस्था होना चाहिए अन्यथा ये रोगों का कारण बनेंगी।

पशुशाला की गोबर व मूत्र की नालियां, चौड़ी व ढालदार होनी चाहिए। इन नालियों द्वारा गोबर, मूत्र बिछावन, भूसा आदि खाद के गढ्ढा में सरलता से जा सकते है। इन नालियों व गढ्ढों को सीमेन्ट से पक्का बनाना चाहिए। नालियां 9 से 12 इंच चौड़ी व 3 इंच गहरी होनी चाहिए। दो पंक्तियों वाली बड़ी पशुशाला की लम्बाई पूर्व पश्चिम की दिशा में होनी चाहिए। लम्बाई पूर्व पश्चिम की दिशा में रखने से पशुओं को हवा का दबाव कम रहता है। जिससे उनको तेज हवा बहने के समय असुविधा नहीं होती है। साथ में रोशनी भी पर्याप्त मात्रा में पशुओं का उपलब्ध रहती है।

अंत में कहा जा सकता है पशुशाला का निर्माण वैज्ञानिक ढंग से किया जा जाना जरूरी है। इसमें पशुओं के लिए छाया, प्रकाश एवं हवा आने की व्यवस्था हो। उनके खड़े रहने तथा बैठने के लिए पर्याप्त जगह हो। पशुशाला को सफाई प्रतिदिन ठीक तरह से करनी चाहिए। जिससे पशुओं को सेहत अच्छी रहती है इससे उनकी कार्यक्षमता एवं दूध उत्पादन में वृद्धि होगी और हमें कम खर्च से अधिक लाभ मिल सकेगा।

गाय व भैंस में ताव (मद) के लक्षणों की पहचान

कुसुमलता झाझड़िया[1], अमित कुमार[2] एवं पूजा[1]

[1]स्नात्कोत्तर छात्र/छात्राएं, [2]सहायक आचार्य,

पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर

अधिकांश मादा पशुओं में उनके शरीर में उत्पन्न हार्मोनों के प्रभाव द्वारा एक निश्चित समयान्तराल के बाद कुछ विशेष व्यावहारिक बदलाव उत्पन्न होते हैं, जिन्हें आम भाषा में ताव (मद) चक्र कहते हैं। मद चक्र की इस अवस्था में मादा पषु में यौन ग्रहणशीलता देखने को मिलती है।

गाय एवं भैंसों में मद चक्र प्रायः 18 से 21 दिनों का पाया जाता है। कई भैंसों में यह लगभग 15 दिन के आस–पास भी पाया जाता है।

lgh le; ij rko ds y{k.kksa dh igpku dk egRo%

- गाय एवं भैंस पालन आर्थिक रूप से तभी फायदेमंद है जब गाय लगभग 12–13 महीने एवं भैंस 16–18 महीने में सामान्य प्रसव द्वारा पूर्ण विकसित बच्चे को जन्म दे।
- अतः यह अति आवश्यक है कि वह मादा पशु यौवनावस्था प्राप्त कर या प्रसव के बाद सही समय पर ताव में आकर पुनः गर्भित हो।
- उचित समय पर गर्भधारण में ताव (मद) के लक्षणों की सही समय पर पहचान का बड़ा महत्व है, जिससे कृत्रिम एवं प्राकृतिक गर्भाधान का प्रबन्धन आसानी से किया जा सकता है।
- फूराव की समस्या के लिए जिम्मेवार विभिन्न कारणों में ताव के लक्षणों की सही समय पर पहचान न होना भी प्रमुख है।
- पशुपालक ताव की सही समय पर पहचान से प्रत्येक गर्भाधारण के लिए जाने वाले कृत्रिम/प्राकृतिक गर्भाधान की संख्या को भी कम कर सकते हैं, जिससे गाय व भैंस में दो सफल प्रसवों के समयान्तराल को भी कम किया जा सकता है।
- पशुपालन के इस प्रबंधन अभ्यास द्वारा प्रति गाय/भैंस उत्पादन आय को भी बढ़ाया जा सकता है।

*Corresponding author: dr.amit1172@gmail.com

xk; ,oa HkSal esa rko ¼en½ voLFkk dh igpku ds fofHkUu rjhds%

ताव के संकेतों की पहचान के विभिन्न परम्परागत एवं आधुनिक तरीके उपलब्ध हैं, जो कि एक सामान्य पशुपालक द्वारा भी आसानी से उपयोग में लाये जा सकते हैं। ये तरीके/विधियां निम्नलिखित हैं –

1- **0;kogkfjd@n`'; ladsr%** गाय व भैंस में मद (ताव) अवस्था में कुछ व्यावहारिक संकेत प्रदर्शित किए जाते हैं, जिन्हें एक सामान्य पशुपालक भी आसानी से देख व समझकर ताव अवस्था को पहचान सकता है।

हालांकि गाय व भैंस में प्रजनन की कार्यिकी में काफी समानता है परन्तु ताव के कुछ लक्षणों की भिन्नता के कारण पशुपालकों को इन्हें अलग–अलग जानना अति आवश्यक है, जिससे गर्भधारण की संभावनाओं को काफी हद तक बढ़ा सकते हैं। गाय व भैंस में ये लक्षण निम्नलिखित हैं–

xk; esa rko ¼en½ ds y{k.k & गाय में यह अवस्था 16 से 18 घण्टे या मोटे तौर पर लगभग एक दिन तक देखी जा सकती है। ताव की अवस्था में गायों में प्रायः निम्नलिखित लक्षण/संकेत देखे जा सकते हैं–

- गाय में ताव की अवस्था में रंभाना एक प्रमुख संकेत हैं।
- इस अवस्था में गाय द्वारा बैचेनी (बार बार उठना–बैठना) एवं बार–बार पेशाब करना जैसे लक्षण भी पशुपालकों को देखने को मिल सकते हैं।
- ताव में होने वाले पशु द्वारा दूसरे पशुओं के ऊपर चढ़ने को स्वीकारते देखा जा सकता है।
- ताव की पूर्व अथवा शुरूआती अवस्था में ताव में आने वाली गाय को दूसरे पशुओं पर चढ़ते देखा जा सकता है, जो उसके शीघ्र ताव की अवस्था में आने का संकेत समझा जा सकता है।

- गायों में शारीरिक तापमान में मामूली वृद्धि, भूख एवं प्यास में कमी आदि शारीरिक लक्षण भी पशुपालक द्वारा देखे जा सकते हैं।
- मद अवस्था में गाय दुग्ध उत्पादन में मामूली कमी भी इसकी पहचान का एक संकेत है।
- मद की अवस्था में गाय के योनि होठों पर सूजन एवं लालीमा देखी जा सकती है।
- गाय इस अवस्था में अपनी पूंछ को भी उठा कर रखती है।
- पशुपालक इस अवस्था में गायों के योनि द्वार से पारदर्शी एवं चिपचिपा स्त्राव भी देखने को मिलता है।
- पशुपालक गाय में ताव के लक्षणों की पहचान कर इस अवस्था की शुरूआत के 12 घण्टे बाद कृत्रिम/प्राकृतिक गर्भधारण करवा लेना चाहिए।

HkSal eas rko ¼en½ ds y{k.kksa dh igpku & गाय की तुलना में भैंस अधिक समय तक ताव में रहती है, परन्तु ताव के लक्षण गायों की तुलना में कम देखे जाते हैं जो कि निम्नलिखित हैं–

- ताव की अवस्था में भैंस में रंभाना गाय की तुलना में बहुत कम या लगभग न के बराबर देखा जाता है इसलिए इसे गुंगी हीट (ताव) वाला पशु कहा जाता है।
- भैंस में गाय की तरह ताव की अवस्था में दूसरे पशुओं पर चढ़ना अथवा दूसरे पशुओं को अपने ऊपर चढ़ने देना आदि भी सामान्यतया नहीं देखा जाता है।
- गाय की तरह भैंस में भी ताव की अवस्था में बेचैनी, भूख में कमी, दुग्ध उत्पादन में कमी एवं शारीरिक तापमान में हल्की वृद्धि आदि कई लक्षण भी पशुपालक द्वारा देखे जा सकते हैं।
- पशुपालक भैंस में योनि होठों में सूजन, लालीमा एवं कई भैंसों में पारदर्शी चिपचिपा स्त्राव आदि लक्षण भी देखकर भी ताव की अवस्था को पहचान सकते हैं।
- भैंस में डोका/डोकी ताव के लक्षणों की पहचान के लिए एक प्रमुख संकेत माना जाता है, जिसमें ताव की अवस्था आने से पूर्व लगभग 2–3 दिन तक (पूर्व मद अवस्था) दूध निकालने के बाद भी थनों में दूध भर कर रखती है, जिसे डोकी कहते हैं।
- मद अवस्था आने पर डोकी जैसे लक्षण धीरे–धीरे गायब होने लगते हैं, जिससे मद को पहचाना जाता है।
- गाय की तुलना में भैंस में ताव के लक्षण बहुत कम देखने को मिलते हैं, जिसके कारण ताव के लक्षणों को सही समय पर पहचानना भी मुश्किल है। अतः भैंसों में प्रजनन प्रबंधन करना बहुत ही चुनौतीपूर्ण है।
- भैंस लगभग 24–36 घण्टे मद अवस्था में रहती है अतः भैंसों में कृत्रिम/प्राकृतिक गर्भाधान के लिए ताव के लक्षणों की शुरूआत के बाद गाय की ही तरह 12 घण्टे बाद एवं इस प्रथम गर्भाधान के 12 घण्टे बाद एक पुनः गर्भाधान करवाना चाहिए जिससे गर्भाधान की संभावनाएं अधिकतम रहती हैं।

2- fjdkMZ la/kkj.k

- पशुपालकों को अधिक आर्थिक लाभ के लिए रिकॉर्ड संधारण भी बहुत महत्वपूर्ण है।
- पशुपालक को हर बार कृत्रिम या प्राकृतिक गर्भाधान की तारीख को लिखना चाहिए।
- पशुपालक द्वारा संधारित इस रिकॉर्ड में प्रतिदिन तारीख को देखकर गाय/भैंस की आगामी ताव अवस्था का पता लगाया जा सकता है।

3- mÙkstd uj@NsM+us okyk@Vhtj uj

- पशुपालक ताव की अवस्था के लक्षणों की पहचान के इस तरीके में पशु चिकित्सक से तैयार करवाए हुए बाधियाकृत नर जिसमें यौन इच्छा हो (वेसेक्टमाइज्ड नर) को मद पहचान के लिए काम में ले सकते हैं।
- इस बाधियाकृत नर पशु के वीर्य में शुक्राणुओं की अनुपस्थिति के कारण ताव के लक्षणों की पहचान के दौरान यह नर संयोग भी कर ले तो गर्भधारण की संभावना भी नहीं रहती है।
- डेयरी पशुपालक जो एक साथ अधिक पशुओं को रखते हैं, उनके लिए यह टीजर नर बहुत उपयोगी है, क्योंकि इसे ताव के लक्षणों की पहचान के समय मादाओं के बाड़े में ले जाकर छोड़ देते हैं।
- मादा पशु जो ताव में होगा वो इस नर के योनि मुख को सूंघकर इसे अपने ऊपर चढ़ने के लिए स्वीकार करेगा। उस मादा को छांटकर अलग कर लेते हैं।
- इस नर पशु को सामान्य खान–पान एवं प्रबंधन के

साथ रखा जा सकता है।

4- iN ij jax yxkdj%

- ताव के लक्षणों की पहचान के इस तरीके में पशुपालक अपनी गाय की पूंछ के जुड़ाव वाले भाग पर चमकदार रंग द्वारा एक रेखा खींच देते हैं।
- ताव के लक्षणों की पहचान की यह विधि प्रायः गायों के लिए काम में ली जाती है। डेयरी पशुपालकों के लिए एक उपयोगी विधि है।
- केवल मद अवस्था वाले मादा पशु ही दूसरे पशुओं अथवा बधियाकृत नर को अपने ऊपर चढ़ने देंगे, जिसके कारण उनकी पूंछ पर बनाई रेखा फैल जाती है।
- पूंछ के ऊपर इस फैली हुई रेखा वाले मादा पशुओं को पशुपालक छांटकर अलग कर सकते हैं।

5- BkMh ij jax dh xan ck/kdj%

- यह विधि भी डेयरी पशुपालकों के लिए एक उपयोगी विधि है।
- इस विधि में एक युक्ति एवं बधियाकृत नर की आवश्यकता होती है, जिसमें एक खाली गेंदनुमा भाग होता है, जिसमें पशुपालक चमकीला रंग भर देते हैं।
- गेंदनुमा के साथ एक चमड़े का बेल्ट लगा होता है, जिसकी सहायता से इसे बधियाकृत (उत्तेजक) नर के जबड़े के नीचे बांध दिया जाता है।
- इस युक्ति के बांधने के पश्चात् इस नर पशुओं को मादाओं के साथ मद परीक्षण के लिए बाड़े में छोड़ दिया जाता है।
- जो भी मादा पशु ताव में होते हैं वो इस नर को अपने ऊपर चढ़ने देते हैं।
- जब भी नर पशु अपने जबड़े (ठोडी) की सहायता से ताव वाली मादा नशु के ऊपर चढ़ता है तो इस युक्ति की गेंदनुमा भाग दबता है, जिससे इसमें भरा चमकीला मादा पशु की पीठ पर गिर जाता है।
- पशुपालक द्वारा इन रंगयुक्त पीठ वाली मादा पशुओं को छांटकर अलग कर लिया है।

6- if'kf{kr 'okuks }kjk%

- मद अवस्था की पहचान इस विधि में प्रशिक्षित श्वानों की आवश्यकता रहती है।
- ताव में होने वाले मादा पशुओं के योनि एवं योनि स्त्राव को बार–बार सूंघाकर श्वान को प्रशिक्षित किया जाता है।
- इस प्रशिक्षित श्वान को मद परीक्षण के लिए मादा पशुओं के बाड़े में छोड़ दिया जाता है।
- श्वान जिन मादा पशुओं को सूंघकर प्रतिक्रिया देते हैं, उन मादाओं को छोड़कर अलग कर लिया जाता है।

7- en voLFkk igpku ds vk/kqfud rjhds%

मद अवस्था के परम्परागत तरीकों के अलावा वर्तमान में कई आधुनिक युक्तियां भी प्रचलन में हैं, जिन्हें एक सामान्य पशुपालक भी उपयोग में ला सकता है। इलेक्ट्रोनिक युक्तियां जैसे हीट वॉच, पेडोमीटर, हीट माउण्ट डिटेक्टर आदि आधुनिक तरीके हैं जो आजकल डेयरी फार्मों पर मद में आने वाले मादा पशु की पहचान के लिए प्रचलित है। ये युक्तियां मादा पशु के शरीर के किसी विशेष भाग पर बांध दी जाती है जो कि उस मादा पशु की शारीरिक गतिविधियों को इलेक्ट्रॉनिक सकेंतों में परिवर्तित करता है। इन इलेक्ट्रोनिक सकेंतों को पढ़कर मद वाले मादा पशुओं को अलग छांट लिया जाता है।

बकरियों में टीट फिस्टुला की समस्या, निदान व उपचार

अमित सांगवान[1], गरिमा चौधरी[2] एवम राजेन्द्र यादव[1]*

[1]हरियाणा पशु विज्ञान केंद्र, महेंद्रगढ़, [2]पशु चिकित्सक, रावल्धि, चरखी दादरी

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पशुपालन व्यवसाय भारत में प्राचीनकाल से प्रचलित है। यह भारतीय अर्थव्यवस्था का एक अभिन्न अंग रहा है विशेष रूप से सीमान्त किसानों के लिए। 2019 की पशु जनगणना के अनुसार हमारे देश में बकरियों की जनसंख्या 148.8 मिलियन है तथा भारत बकरी पालन में दुनिया के कुछ अग्रिणी देशों में से एक है। आने वाले समय में बकरी पालन कम लागत में अधिक आय देने वाले व्यव्साय के रूप में एक अच्छा विकल्प साबित हो सकता है। लेकिन जैसे हर व्यव्साय के साथ कुछ चुनौतियां होती हैं वैसे ही बकरी पालन में भी समय–समय पर परेशानियों का सामना करना पड़ सकता हैं। इनमे से ही एक चुनौती है टीट फिस्टुला। यह एक शल्य चिकित्सा सम्बन्धी समस्या है जिसमें थन फटने के कारण सारा दूध चोटिल स्थान से बाहर आने लग जाता है। समय पर उपचार न करने पर पशु के थन व ओडी इन्फेक्शन से ख़राब हो सकती है तथा वह पशु सदा के लिए दूध देने में असमर्थ हो सकता है। इससे बकरी पालन व्यवसाय को बहुत नुकसान उठाना पड़ता है। अतः इस लेख के माध्यम से टीट फिस्टुला के कारण, निदान व उपचार पर प्रकाश डाला गया है।

dkj.k

बकरी में थन लम्बे व सिलिंडर के आकर के होते हैं अत ज़मीन के काफी नज़दीक होते हैं। खेतों में चरते समय कटीले तारों से या ज़मीन पे किसी नुकीली चीज़ से चोटिल हो कर थन फट सकते हैं जिस से टीट फिस्टुला हो सकता हैं और उसमें से दूध बाहर गिरने लगता है। यह स्थिति एक या दोनों थनों को प्रभावित कर सकती है। कभी–कभी बकरियों के पैने सींगों से चोट लगने पर भी टीट फिस्टुला हो सकता है। दूध पीते वक्त मेमने के दांतों से थन में चोट लग सकती है जो की सही समय पर इलाज न होने पर या ज्यादा इन्फेक्शन होने पर टीट फिस्टुला का रूप ले सकती है।

*Corresponding author: drrajendrayadav@gmail.com

funku

इस समस्या का निदान बड़ा ही सरल है। यदि थनों के घाव से दूध रिस रहा हो तो इसे टीट फिस्टुला कहा जाता है। लेकिन यदि घाव ज्यादा गहरा नहीं है और दूध भी नहीं रिस रहा है तो इसे टीट लेसीरेशन कहा जाता है। टीट लेसीरेशन को सामान्य घाव की तरह सिर्फ लिक्विड बीटाडीन से साफ़ करके भी ठीक किया जा सकता है।

mipkj

टीट फिस्टुला का उपचार शल्य चिकित्सा से ही किया जा सकता है । प्रभावित थन को एक टीट साइफन से खली करके साफ़ किया जाता है तथा लोकल एनेस्थीसिया (लिग्नोकैन हाइड्रोक्लोराइड) लगाकर सुन किया जाता है। टीट फिस्टुला को कैटगट टाके लगा कर ठीक किया जाता है तथा बाहरी खाल पर सिल्क के धागों से वर्टीकल मत्रेस टाके लगाए जाते हैं। आपरेशन के बाद टांकों की सफाई का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। इन पर सुबह–शाम लिक्विड बीटाडीन से साफ़ करके फ्लाई रेपेल्लेंट स्प्रे किया जाता है। टांकों को बाहरी इन्फेक्शन से बचाने के लिए कपड़े के सिले आवरण (कोथली) से ढक कर रखा जाता है। पाँच दिन एंटीबायोटिक तथा दर्दनिवारक दवाओं का कोर्स दिया जाता है। आपरेशन के 15–20 दिन बाद सही से घाव भरने पर खाल के टाँके काटे जाते है। यदि पशु दुध दे रहा है तो कुछ दिनों के लिए थन से दूध निकालने के लिए नलकी लगायी जा सकती है। सही समय पर उपचार मिलने से पशु वापीस से नार्मल दूध देने लग जाते हैं।

è;ku nsus ;ksX; ckrsa&

- खेत में या चारागाह में बकरियों को चराते हुए ध्यान रखें की वे बाड की तार के ऊपर से न कूदें। ब्यांत के नज़दीक पशु का ख़ास ध्यान रखे।
- टीट फिस्टुला होने पर जल्द से जल्द उपचार के

लिए नजदीकी पशु चिकित्सक से संपर्क करें। देरी करने पर इन्फेक्शन ज्यादा होगा व थनैला रोग की सम्भावना बढ़ जाएगी।

- आपरेशन होने के बाद टांकों की सफाई का विशेष ध्यान रखना होता है जिसमे लापरवाही करने से इन्फेक्शन हो सकता हैं तथा दोबारा आपरेशन करने की नौबत आ सकती है। इस तरह के आपरेशन के सफल होने की संभावना बहुत कम हो जाती है।
- आपरेशन होने के बाद मेमनों को सीधे थनों से दूध न पिलाएं अन्यथा वो दांतों से टाँके काट सकते हैं।
- यदि टीट फिस्टुला बहुत पुराना हो गया है तब भी उत्तकों को फ्रेश करके इसका आपरेशन किया जा सकता है और वह पशु नार्मल दूध दे सकता है।

बछियों का प्रबन्ध

कमलदीप[1], अनीता दलाल[2] एवं अनिका मलिक[3]

[1]पशु आनुवंशिकी एवं प्रजनन विभाग; [2]पशु पशुपालन विस्तार शिक्षा विभाग; [3]पशु सूक्ष्मजीव विज्ञान विभाग
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

बछियां पशुओं के समूह की होने वाली गाय है। बछिया उस गाय को कहते हैं जिसने अभी तक बच्चे को जन्म नहीं दिया है। बछिया पहला बच्चा देने के बाद गाय बन जाती है। इसलिए बछियों को प्रबन्धन का विशेष ध्यान रखना चाहिए। मुख्यतः उत्पादन क्षमता उनका बच्चा देने के एक या दो वर्ष पूर्व की गई देखभाल और ध्यान पर निर्भर करती है। बछिया की वृद्धि भारतीय नस्ल की बछियां (होने वाली गाय) पाश्चात्य देशों की नसलों की अपेक्षा अधिक देर में बड़ी होती हैं तथा बच्चा देती है परन्तु अच्छी प्रकार की बढ़ोत्तरी के लिए नीचे लिखी बातों को ध्यान में रखना चाहिए –

1. विभिन्न उम्र के बच्चों के समूहों की अच्छी प्रकार खिलाने और प्रबन्ध के लिए अलग–2 बाड़ों में रखना चाहिए।
2. बछियों को चारे या मोटे चारे पर पाला जा सकता है। उनको अच्छा पोषक और शक्तियुक्त भोजन देना चाहिए। जब बच्चे एक वर्ष के हो तब एक किलोग्राम दाने की रसद प्रतिदिन अच्छे हरे और सूखे चारे की मात्रा के अतिरिक्त उनको देकर पाले जा सकते हैं।
3. 6 माह से बच्चा देने की अवस्था तक अच्छी तरह खाना खिलाना चाहिए पर अधिक नहीं क्योंकि असामान्य भार वाली बछियां एक अच्छी डेरी गाय नहीं बन सकती। प्रारम्भिक वृद्धि की अवस्थाओं में शक्ति की अपेक्षा अधिक प्रोटीनों की आवश्यकता होती है।
4. भोजन खिलाने की लागत : बछड़ों को पालना बहुत अधिक खर्चे का कार्य है। इसलिए नवजात बछड़ों की दूध छुड़ाने की और ध्यान दिया जाता है। अधिक दूध देने वाली बछियों को ही आदान प्रदान के लिए पालना पड़ता है। पशु समुदाय के कम से कम चौथे भाग को ही पालना चाहिए।

lkjk'kr%

1. केवल अच्छा दूध देने वाले केवल उन्हीं बछियों को चुनना चाहिए जो अच्छे उत्पादन वाले सांडों से प्रजनित हो।
2. नर व मादा पशुओं की वंशावली को उनके चुनने से पहले अच्छी तरह जांच करनी चाहिए।
3. प्रथम बच्चा देने की आयु : बछिया की उम्र की अपेक्षा उसके शरीरभार को प्रथम सेवा का आधार बनाना चाहिए। हमारे देश में गाये भारतीय बछिया की प्रथम सेवा आयु 33–37 महीने हैं किन्तु अच्छे प्रबन्ध की सहायता से यह कम की जा सकती है। औसतन बछिया के शरीर का भार प्रथम सेवा के समय 200–250 कि.ग्रा. होता है। डेरी उद्योग को लाभकारी बनाने के लिए प्रतिवर्ष एक बच्चा देना और 15 महीने में भैसों के लिए एक बच्चा देना अपेक्षित है।
4. बच्चा देते समय की देखभाल : साधारण तथा बछड़ा 5 या 6 घंटें के कष्ट युक्त श्रम में ही जन्म ले लेता है। बछड़े के जन्म के समय उसकी आगे की दोनों टांगें मुंह के बीच में होती है। असाधारण दशा में पशु चिकित्सक की सलाह लेनी चाहिए। साधारण तथा पशु 4 से 8 घंटे के अंदर ही नाल बाहर फैकता है यदि ऐसा न हो तो पशु को कुछ गर्म पानी देना चाहिए और गर्म पानी में भीगा हुआ गेहूं खिलाना चाहिए। नाल को जमीन में दबाया जाता है ताकि पशु न खाए।
5. दुधारू पशु को ब्याने के बाद हल्का भोजन देना चाहिए। इस हल्के भोजन में पहले कुछ दिन गेहूं का आटा या दलिया जो गुड़ के साथ उबाला गया हो दिया जाता है तथा बाद में नियमित रूप से दाने का मिश्रण दिया जाता है। दाने की मिश्रण की मात्रा धीरे–धीरे बढ़ाई जाती है। जिससे 15 दिन के पश्चात् आवश्यक रसद उपलब्ध रहे।

Fkuksa dk elyuk%& प्रथम बार बछड़ा देने वाली गाय के थनों की मालिश करके मसलना दूध निकालने में लाभप्रद रहता है। कभी–2 प्लाज्मा के एकत्रित होने के कारण पशु अपने थनों को छूने नहीं देते। परन्तु पशु के प्रति धैर्य, नम्रता और प्यार दिखाने से 3–4 दिन में ही नियमित रूप से दूध निकालने देता है।

*Corresponding author: aarzoodhundwal@gmail.com

फार्म विवरण का महत्त्व

कमलदीप[1], अनिका मलिक[2] एवं अनिता दलाल[3]

[1]पशु आनुवंशिकी एवं प्रजनन विभाग, [2]पशु पशुपालन विस्तार शिक्षा विभाग, [3]पशु सूक्ष्मजीव विज्ञान विभाग
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

कोई भी उद्योग या व्यवसाय उस समय तक लाभकारी अवस्था में नहीं चल सकता जब तक कि उसके रिकार्ड को अच्छी प्रकार न रखा जाए। अच्छे व बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग से रिकार्डों को रखने से डेरी के व्यवस्थापक को अपने व्यवसाय को अवस्था के बारे में सही जानकारी मिलती है। अच्छी प्रकार रखा गया रिकार्ड ही अर्जित लाभ देता है। अगर फार्म विवरण को अच्छी तरह न रखा जाए तो पूरा व्यवसाय नष्ट हो जाता है। यह साधारण तथा धारणा है कि रिकार्ड का रखना एक कठिन कार्य माना जाता है।

इसमें कोई सन्देह की बात नहीं है कि अच्छी प्रकार से रिकार्ड के रखने के लिए कुछ अतिरिक्त व्यक्तियों की आवश्यकता हो सकती है किन्तु इस अतिरिक्त खर्चें से इस व्यवसाय को काफी हद तक अच्छी प्रकार स्थापित करके संतुलित किया जा सकता है। वर्ष के अंत में लाभ हानि का लेखा जोखा फार्म की वास्तविक स्थिति को जानने के लिए तैयार करना आवश्यक है। यदि व्यवसाय हानि में चला जाता है तब कार्य करने के तरीकों के बारे में अच्छी प्रकार से की गई जांच अपेक्षित होगी। इस प्रकार की जांच के आधार पर त्रुटि का पता लगाया जा सकता है। अंत में यह कहना ही पर्याप्त होगा कि अच्छी तरह से फार्म विवरण रखना लाभकारी डेरी उद्योग को चलान के लिए एक आवश्यक प्रबन्ध संबंधी आवश्यकता है। प्रायः रिकार्ड दो ही प्रकार के होते है। लागत के रिकार्ड और उत्पादन संबंधी रिकार्ड।

ykxr ds fjdkMZ %& पशुधन रजिस्टर, भवन रजिस्टर, भोजन का रजिस्टर व स्थायी भंडार का रजिस्टर।

mRiknu lacaa/kh fjdkMZ %& दूध रिकार्ड का रजिस्टर, श्रम संबंधी रजिस्टर, दूध एवं दूध द्वारा निर्मित पदार्थों के उपभोग का रजिस्टर व विविध रजिस्टर।

*Corresponding author: aarzoodhundwal@gmail.com

उत्तम सांड का चयन

कमलदीप[1], अनिका मलिक[2] एवं सरिता[3]

[1]पशु आनुवंशिकी एवं प्रजनन विभाग, [2]पशु पशुपालन विस्तार शिक्षा विभाग, [3]विस्तार शिक्षा
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

भारतवर्ष में सांड का सदैव ही कृषि में विशेष स्थान रहा है और पूज्य रहा है। मुख्यतः बोस जीनस ढोर जाति के नर को सांड कहते है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि सांड का वंश वृद्धि में विशेष योगदान रहा है इसलिए सांड ढोर समूह के आधे के बराबर होता है। ढोर समूह में दुग्ध उत्पादन क्षमता, चिकनाई उत्पादन आदि बढ़ाने में सांड विशेष भूमिका निभाते हैं। यह धारणा अमैयूनिक संसेचन भ्रूण प्रतिरोपण आदि को सफलता से बदल सकती है। परन्तु वर्तमान समय में अनुवांशिकी वृद्धि के लिए केवल सांड मुख्य है। इसके अतिरिक्त एक उत्तम सांड की आवश्यकता इसलिए भी होती है इसके परिणाम 3–4 वर्ष उपरान्त प्राप्त होते हैं जबकि इसकी संतति उत्पादन आरम्भ करती है और उस अवस्था में पश्चाताप करने का कोई लाभ नहीं होगा। इसलिए उत्तम सांड के चयन हेतु निम्नलिखित तथ्यों को ध्यान में रखना चाहिए।

1. सभी प्रकार के रोगों के लिए तथा प्रजनन क्षमता के लिए पूर्णरूपेण सांड का परीक्षण कर लें।
2. सांड में किसी भी रोग का लक्षण ना दिखाई दे और शारीरिक विकृति का कोई लक्षण न दिखाई दे तथा टी.वी. ब्रसलोसिस, ट्राईकोमोनिएसिस आदि रोगों से रहित हो।
3. संतति में वांछित गुणों को अनुवांशिकी रूप से पहुँचाने की क्षमता हो।
4. सांड के प्रजनन आंकड़े अच्छे हो, वंशावली देखकर सांड का चयन किया जा सकता है।
5. वंशावली आंकड़े, समय, जनक, माँ, महोदर, अर्ध सहोदर, और पितामह को अधिक महत्त्व देते हैं।
6. आय अनुसार व्यस्क सांड की अपेक्षा युवा सांड को महत्त्व देते हैं।
7. सांड के प्रत्यक्ष रूप को भी विशेषता देते है। सांड स्वस्थ, उत्तेजक, मर्दाना, प्रभावशाली, आकर्षक व सुशील स्वभाव वाला हो।
8. यदि सांड को कृत्रिम गर्भाधान के लिए उपयोग में लाना है तो वीर्य की मात्रा व अन्य गुण वांछित रूप से हो।
9. वीर्य की संचयन क्षमता भी अच्छी होनी चाहिए।

*Corresponding author: aarzoodhundwal@gmail.com

लम्पी स्किन डिजीज (एलएसडी/ ढेलेदार/गांठदार त्वचा रोग)

दिव्या अग्निहोत्री, स्नेह लता चौहान एवं शालिनी शर्मा

पशु चिकित्सा रोग निदान विभाग, पशु चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा।

लम्पी स्किन डिजीज "एलएसडी", मवेशियों और भैंसों की एक तेजी से फैलने वाली विषाणुजनित बीमारी है। यह बीमारी पशुपालकों के आर्थिक नुकसान का प्रमुख कारण है। इस बीमारी से मवेशियों की सभी उम्र और नस्लें प्रभावित होती हैं, लेकिन विशेष रूप से कम उमर के दुधारू मवेशी अधिक प्रभावित होते हैं। एलएसडी त्वचा रोग मवेशियों, भैंसों और जंगली जुगाली करने वाले जानवारों को प्रभावित कर सकता है। युवा बछड़ों, दूध पिलाने वाली गायों और कम वजन वाले जानवरों में प्राकृतिक संक्रमण होने की संभावना अधिक होती है। विश्व पशु स्वास्थ्य संगठन ने इस ट्रांसबाउंड्री बीमारी को "नोटिफाईबल डिजीज" की श्रेणी में रखा है। जुगाली करने वाले घरेलू जानवरों को प्रभावित करने वाला "पॉक्सविरिडे" परिवार का यह वायरस सबसे महत्वपूर्ण है।

jksx dk y{k.k& रोग की गंभीरता, जानवर की उम्र, नस्ल, रोग प्रतिरोधक क्षमता और उत्पादन अवधि से प्रभावित होती है। रोग के प्रमुख लक्षणों मे बुखार, अनुपयुक्तता, नाक से स्राव, लार और आँखों से पानी आना, बड़ी हुई लसीका ग्रंथियाँ "लिम्फ नोड्स", दूध उत्पादन में काफी कमी, शरीर के वजन में कमी और कभी–कभी मृत्यु शामिल हैं। बुखार की शुरूआत के शीघ्र बाद, आम तौर पर, गर्दन, पैर, पूंछ और पीठ पर उभरे हुए, परिबद्ध त्वचा पिंड, एलएसडी रोग की विशेषता है।

कुछ पशुओ में पैरों की सूजन और लंगड़ापन देखा जाता है। एलएसडी विषाणु से गर्भपात, थनेला और अंडकोष की सूजन "ऑर्काइटिस" हो सकती है। गंभीर बीमारी की जटिलताओं में कॉर्निया की सूजन के कारण आंखों में पानी, दर्द और धुंधला दिखाई देना, पेचिश, लंगड़ापन, निमोनिया, थनेला और मायियासिस (घाव में मख्की के कीड़े पढ़ना) प्रमुख हैं। जो जानवर इस वायरस के प्राकृतिक संक्रमण से उबर चुके हैं, उनमे रोग के प्रति आजीवन प्रतिरक्षा होती है।

संचरणरू भेड़ और बकरियां वायरस से संक्रमित नहीं होती हैं। एलएसडी पर्यावरण में लंबे समय तक व्यवहार्य रह सकता है। संक्रमण के मुख्य स्रोत त्वचा के घाव माने जाते हैं क्योंकि वायरस लंबे समय तक घावों या पपड़ी में बना रहता है, खासकर सूखी पपड़ी में। एलएसडी विशेष रूप से रक्त

*Corresponding author: dr_divya_agnihotri@yahoo.co.in

भैंस एवं गाय में लम्पी स्किन डिजीज "एलएसडी रोग"

चूसने वाले कीड़ों, दूषित फ़ीड और पानी के माध्यम से प्रेषित होता है। पशुओं की लार, नाक स्राव और वीर्य के माध्यम से रोग के बाद के चरणों में सीधा संचरण होता है। चिचर्ड (टिक्स) वायरस के लिए कोश के रूप में कार्य कर सकते हैं। मच्छर ("एडीज इजिप्टी") अति संवेदनशील मवेशियों में वायरस को पूरी तरह से प्रसारित करने में सक्षम है। एलएसडी वायरस को मच्छर ("क्यूलिकोइड्स पंक्टेटस") में पाया गया है, यह भी वायरस के संचरण में भूमिका निभा सकता है।

jksdFkke vkj fu;a=.k नियंत्रण रणनीतियों के रूप में प्रभावित क्षेत्र से पशुओं की आवाजाही पे रोक, एवं बीमार पशुओं को स्वस्थ जनवारो से अलग करना और अनिवार्य और लगातार टीकाकरण करना है। संक्रमित जानवरों को हटाने में किसी भी देरी से एलएसडी संचरण का खतरा बढ़ जाता है। इसके अतिरिक्त, पशु चिकित्सकों और पशुपालकों को शिक्षित करना ताकि वे रोगों का समय पर निदान कर सकें जो अंततः बीमारी के प्रसार को धीमा करने में मदद करता है। इसके अलावा, नैदानिक निदान की तेजी से पुष्टि आवश्यक है ताकि उन्मूलन के उपाय, जैसे प्रभावित और संपर्क में आने वाले जानवरों को अलग करना, शवों का उचित निपटान, परिसर की सफाई और कीटाणुशोधन और कीट नियंत्रण को लागू किया जा सके।

इस प्रकार, टीकाकरण जैसे प्रभावी निवारक उपायों के कार्यान्वयन से बेहतर रोग नियंत्रण हो सकता है। इसलिए, स्थानिक क्षेत्रों में सटीक और समय पर निदान, एलएसडी वायरस के लिये टीकाकरण, कीट "वेक्टर" नियंत्रण, पशुओं की आवाजाही पर प्रतिबंध और प्रजनन के लिए उपयोग किए जाने वाले सांडों के एलएसडी वायरस परीक्षण करना अत्यधिक जरूरी है ताकि इस रोग के प्रसार को नियंत्रित किया जा सके।

भेड़–बकरियों में मुख्य विषाणुजनित रोग एवं उनकी रोकथाम

रिक्की झाँभ[1], राजेन्द्र यादव[2] और युधवीर सिंह[1]

[1]पशु औषधि विज्ञान विभाग, [2]हरियाणा पशु विज्ञान केंद्र, महेंद्रगढ़
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

भेड़ बकरियों में होने वाले मुख्य विषाणुजनित रोगों का विवरण व उनकी रोकथाम के उपाय इस प्रकार हैं–

1- cdjh lyx ¼ih-ih-vkj-½

dkj.k& भेड़–बकरियों में होने वाला यह संक्रामक रोग, पी. पी. आर नामक विषाणु जो कि मोरबिली वायरस प्रजाति के अंतर्गत आता है, के कारण होता है। भेड़ों की अपेक्षा बकरियों में इस रोग की गंभीरता अधिक है जिनमें 4 माह से 1 वर्ष की आयु के अल्पव्यस्क मेमने रोग के प्रति सर्वाधिक संवेदनशील हैं। स्वस्थ पशुओं में यह रोग, रोगी पशु के सीधे संपर्क में आने से होता है। इसके अतिरिक्त दूषित आहार व पानी से भी रोग फैल सकता है।

jksx dk y{k.k&

पीड़ित पशु में तेज बुखार आना, होठों, मसूढ़ों, गाल की भीतरी सतह व जीभ पर श्लेष्मिक, स्खलन प्रकृति के घाव होना, इस रोग के मुख्य लक्षण हैं। साथ में आंख और नाक से स्राव आना, खासना, निमोनिया आदि लक्षण भी देखे जाते है। अंतिम अवस्था में खून मिले पतले दस्त पाए जाते है एवं पशु की मृत्यु हो जाती है।

jksdFkke&

भेड़ बकरियों में रोग की रोकथाम के लिए टीका अति प्रभावी है जो कि 4 माह की आयु में लगाया जाता है और 3 वर्ष तक सुरक्षा प्रदान करता है।

2- HksM+ ekrk jksx ¼HksM+ iksDl½

dkj.k& भेड़–बकरियों में होने वाला यह संक्रमण रोग, भेड़ या बकरी पॉक्स नामक विषाणु से होता है जो कि रोगी पशु के सीधे सम्पर्क या बाड़े में पाई जाने वाली मक्खी के काटने से होता है।

jksx dk y{k.k&

रोग के मुख्य लक्षणों में शुरूआती बुखार आना, कम ऊन/बाल वाले हिस्सों जैसे सिर, गर्दन, कान, जांघों एवं पूंछ के नीचे की चमड़ी पर लाल चकते पड़ना जो कि 0.5–1.5 से.मी. की गाठों में बदल जाते हैं और बाद में गलने पर सख्त पपड़ी के रूप में दिखाई देते है जिसे उतारने पर पक्का निशान रह जाता है। चमड़ी के साथ– साथ यह रोग शरीर के आंतरिक अंगों जैसे फेफड़ों में गाठों के रूप में भी फैलता है जिस कारण पशु को खांसी एवं सांस लेने में कठिनाई आती है।

jksdFkke&

भेड़ों में रोग की रोकथाम के लिए टीका उपलब्ध है जो कि 3 माह की आयु में लगाया जाता है, तत्पश्चात् प्रतिवर्ष टीके की सलाह दी जाती है। रोग की स्थिति में साफ सफाई का विशेष ध्यान रखें।

3- eqgk jksx ¼dUVsft;l ,DFkkbek½

dkj.k& भेड़–बकरियों का यह अति संक्रमण रोग है जो कि पैरापॉक्स समूह के विषाणु के कारण होता है। व्यस्क पशुओं की अपेक्षा मेमनों में यह रोग अधिक होता है। स्वस्थ पशु में यह रोग मुख्यतः रोगी पशु के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष संपर्क में आने से होता है।

jksx dk y{k.k&

प्रभावित पशु में शुरूआती बुखार के बाद थूथन एवं होठों पर फफोलेदार घाव जिनमें बाद में पपड़ी जम जाती है, बन जाते हैं। मेमनों में यह घाव चेहरे, कान, पैर, जांघ या अंडकोष की थैली की चमड़ी पर भी हो सकते है। 3–4 सप्ताह में यह घाव ठीक होने लगते हैं।

jksdFkke&

रोग की स्थिति में पशु बाड़े में साफ सफाई का विशेष ध्यान रखें। प्रभावित पशु को तुरन्त स्वस्थ पशुओं से अलग रखें एवं उपचार करवाएं। इस रोग का अब तक कोई टीका उपलब्ध नहीं है।

*Corresponding author: jhambricky@gmail.com

4- uhy ftOgk ¼Cyw Vax½

dkj.k& यह भेड़ों में पाया जाता जाने वाला अछूत का रोग है जो कि ओर्बीवायरस नामक समूह के विषाणु के कारण होता है। इस रोग का संचारण मुख्यतः काटने वाले मक्खी–मच्छरों के कारण होता है। छोटी आयु के पशुओं में लक्षण अधिक तीव्र होते हैं।

y{k.k&

रोग की प्रारंभिक अवस्था में तेज बुखार, अधिक लार पड़ना, मुँह एवं नाक की श्लेष्मिक झिल्ली की लालिमा आदि लक्षण दिखाई पड़ते हैं। बाद में लार व नासिक स्त्राव रक्तरंजित हो सकता है। होंठ, मसूड़े, जीभ में सूजन आ सकती है जिससे कि जीभ मुँह से बाहर निकल आती है एवं अतितीव्रता की अवस्था में जीभ नीली पड़ जाती है। यह शोथ पशु के खुर तथा उसके ऊपरी हिस्से में भी दिखाई देती है जिस कारण पशु लंगड़ाकर चलता है।

jksdFkke&

पशु बाड़े में मक्खी–मच्छरों से बचाव के लिए कीटनाशक का प्रयोग करें। कुछ ही समय पहले भेड़ों में रोग की रोकथाम के लिए टीका उपलब्ध हुआ है जो कि 3 माह की आयु में लगावाया जाता है, तत्पश्चात् प्रतिवर्ष टीका लगावाएं।

5- eqg&[kqj jksx ¼,Q- ,e- Mh-½

dkj.k& पशुओं में यह रोग एफथोवायरस समूह के विषाणु के कारण होता है। प्राकृतिक रूप से यह रोग गाय, भैंस, भेड़, बकरी एवं सूअरों को प्रभावित करता है हालांकि भेड़ बकरियों में इस रोग की तीव्रता अधिक नहीं है। यह रोग प्राय रोगी पशु के सीधे सम्पर्क या श्वांस मार्ग द्वारा विषाणु के प्रवेश करने से होता है।

y{k.k&

भेड़ बकरियों में यह रोग प्रायः अलाक्षणिक रहता है। इन पशुओं में लंगड़ापन आना, इस रोग का पहला लक्षण हो सकता है जिनमें कि पशु के चारों पैरों पर फफोले जैसे घाव हो सकते हैं।

jksdFkke&

रोग की रोकथाम के लिए टीका उपलब्ध है जो कि भेड़–बकरियों में 4 माह की आयु में लगाया जाता है। तत्पश्चात् वर्ष में दो बार टीकारण की सलाह दी जाती है। रोग की स्थिति में बाड़े की 1–2 प्रतिशत कास्टिक सोड़ा या 4 प्रतिशत वाशिंग सोड़ा से विसंक्रमण करें।

पारंपरिक पशु चिकित्सा पद्धतियां

राजेंद्र यादव[1], पंकज कुमार[2], देवेंद्र सिंह[1]* एवं अमित सांगवान[1]

[1]हरियाणा पशु विज्ञान केंद्र, महेंद्रगढ़, [2]पशु रोग जाँच प्रयोगशाला, रोहतक

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

Þç–fr gh viu vki e lcl vPNh fpfdRld gß

– हिप्पोक्रेट्स

पारंपरिक या नृवंश चिकित्सा विज्ञान एक बहु–विषयक चिकित्सा पद्धति है जिसमे प्राकृतिक वातावरण में औषधीय पौधों का उपयोग करके बिमारियों का उपचार किया जाता है और यह पद्धति खासकर हमारे देश में सदियों से लोगों के लिए चिकित्सा का स्रोत रही है। नृवंश पशु चिकित्सा विज्ञान पशु स्वास्थ्य की पारंपरिक देखभाल के लिए एक वैज्ञानिक शब्द है जो विभिन्न समुदायों के सदस्यों के बीच पाए जाने वाले पशु स्वास्थ्य देखभाल के पारंपरिक ज्ञान, कौशल, विधियों, प्रथाओं और विश्वासों पर आधारित है। लगभग 5–6 हजार साल पुरानी हमारी सभ्यता में सदा से ही पशुओं को घर के सदस्य के रूप में पाला जाता रहा है तथा उनके उपचार के लिए भी प्राकृतिक रूप से उपलब्ध संसाधनों का प्रयोग किया जाता रहा है। इस पद्धति से पशुओं की विभिन्न बिमारियों का उपचार सस्ता, एंटीबायोटिक के दुष्प्रभाव रहित, पशु की रोग प्रतिरोधक क्षमता पर दुष्प्रभाव रहित एवं पशु तथा पशुओं के विभिन्न उत्पादों पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव रहित होता है। पशु चिकित्सा के लिए प्राकृतिक एवं औषधीय पौधों के प्रयोग एवं नृवंश विज्ञान पशु चिकित्सा पद्धतियों को बढ़ावा देना एक बहुत ही सराहनीय कदम साबित हो सकता है जिसमें कि पशुओं, पशुपालकों तथा समाज सभी का हित निहित है। भारत में पशुओं के उपचार के लिए एक बहुत ही समृद्ध और प्रभावी प्राकृतिक एवं औषधीय पौधों के प्रयोग एवं नृवंशविज्ञान पशु चिकित्सा पद्धतियों का ज्ञान उपलब्ध है जो कि ग्रामीण लोगों में एवं पारम्परिक साहित्य में उपलब्ध है।

,frgkfld i"BHkfe

भारत में पुराने समय से ही पशुओं की चिकित्सा के लिए विभिन्न जड़ी–बूटियों का प्रयोग किया जाता रहा है। यह पशु चिकित्सा विज्ञान की पद्धतियां विभिन्न समुदायों में सदियों से लोगों के बीच प्रचलित रही हैं तथा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में मुख्य रूप से मौखिक रूप में पारित होती रही हैं। प्राचीनकाल से ही हमारे देश में वैदिक साहित्य, विशेष रूप से अथर्ववेद जानवरों की बीमारियों के इलाज के लिए नुस्खे सहित पारंपरिक चिकित्सा का भंडार रहा है। स्कंद पुराण, देवी पुराण, मत्स्य पुराण, अग्नि पुराण, गरुड़ पुराण, लिंग पुराण जैसे शास्त्रों, और चरक, सुश्रुत, पालकाप्य (1000 ईसा पूर्व) और शालिहोत्र (2350 ईसा पूर्व) जैसे विद्वानों द्वारा लिखित ग्रंथों में औषधीय पौधों का उपयोग करके पशुओं की बीमारियों के उपचार का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। महाभारत की लड़ाई के दौरान हजारों जानवर चोटिल हुए और विभिन्न बीमारियों से भी पीड़ित हुए जिनका इलाज तब औषधीय पौधों से किया गया था। नकुल और सहदेव क्रमशः घोड़े और गायों के चिकित्सक भी थे।

egRo

पशुओं के इलाज के लिए अंग्रेजी दवाओं के स्थान पर या अंग्रेजी दवाओं की मात्रा में कमी करते हुए प्राकृतिक रूप से उपलब्ध जड़ी–बूटियों के ज्यादा से ज्यादा इस्तेमाल पर बल दिया जाना चाहिए क्योंकि ऐसे उपचार में दवाओं के दुष्प्रभाव की संभावना लगभग शून्य रहती है। नृवंश पशु चिकित्सा विज्ञान (एथ्नोवेटेरिनरी मेडिसिन) पशु स्वास्थ्य के लिए ऐलोपैथी दवाओं की तुलना में सस्ता विकल्प प्रदान करता है और स्थानीय रूप से आसानी से उपलब्ध हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार विकासशील देशों में कम से कम 80% लोग जानवरों और मनुष्यों की विभिन्न बीमारियों के नियंत्रण और उपचार के लिए इन पद्धतियों पर काफी हद तक निर्भर हैं। चिकित्सा के अलावा विभिन्न जातीय समुदाय न केवल घरेलू खपत के लिए बल्कि पारिवारिक एवं सामुदायिक आय के व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए भी औषधियों पौधों और जड़ी–बूटियों का उपयोग करते हैं इससे जैविक संसाधनों के संरक्षण के साथ–साथ क्षेत्रीय और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं को भी बल मिलता है।

*Corresponding author: drdev18@gmail.com

vko';drk

वर्तमान में पशुओं के इलाज में जीवाणुनाशक और रासायनिक दवाओं का भारी मात्रा में प्रयोग हो रहा है, जिस कारण मानव एवं पशु स्वास्थ्य को भारी हानि हो रही है। जीवाणुनाशक (एंटीबायोटिक) दवाओं की उच्च लागत, पशुओं के स्वास्थ्य पर विनाशकारी प्रभाव, पशु उत्पादों में जीवाणुनाशक दवाओं के अवशेष एवं जीवाणुओं में जीवाणुनाशक दवाओं के प्रति बढ़ता प्रतिरोध इत्यादि मुख्य कारण हैं जिनकी वजह से पशुओं की बिमारियों के उपचार के लिए प्राकृतिक एवं औषधीय पौधों के प्रयोग एवं नृवंशविज्ञान पशु चिकित्सा पद्धतियों को बढ़ावा देना अत्यंत आवश्यक है। महंगी अंग्रेजी/एलोपैथी दवाओं की खरीद की वजह से किसानों के लिए पशुधन लाभ की बजाय घाटे का सौदा बनता जा रहा है। सदियों तक पशुओं के ही नहीं बल्कि मनुष्यों की बिमारियों के उपचार के लिए हम प्राकृतिक रूप से उपलब्ध जिन कुदरती संसाधनों का उपयोग करते रहे हैं आज हम उन्हें ही छोड़कर अपने लघु एवं तात्कालिक स्वार्थ के लिए ऐलोपैथी दवाओं का अंधाधुंध प्रयोग कर रहे हैं।

ikjaifjd ;kuo'k i'kq fpfdRlk foKku ds ?kVd

- **vk"kfèk; ikèk&** पशुओं की विभिन्न बिमारियों के उपचार के लिए सबसे अधिक इस्तेमाल किये जाते हैं। दुनियाभर में लगभग 35,000 से अधिक पौधों में औषधिय गुण पाए जाते हैं। औषधिय पौधे के लगभग सभी हिस्सों जिसमें छाल, पत्ते, तना, फूल, जड़, बीज और फल शामिल हैं, का उपयोग एथ्नोवेटेरिनरी मेडिसिन बनाने में किया जाता है।
- **feêh vkSj [kfut&** दीमक और चींटियों द्वारा इस्तेमाल की गयी मिट्टी, और चूना पत्थर इत्यादि का उपयोग आमतौर पर विभिन्न एथ्नोवेटेरिनरी मेडिसिन बनाने में किया जाता है।
- **i'kq vkSj mudk mRikn&** पशुओं के उत्पाद जैसे कि दूध, मक्खन, घी, छाछ, मूत्र, गोबर एवं विभिन्न मृत पशुओं की त्वचा, खाल, वसा एवं हड्डियाँ भी विभिन्न एथ्नोवेटेरिनरी मेडिसिन के घटक होते हैं।
- **vU; lkexh&** शहद, वनस्पति तेल एवं घी, गुड़ और नमक इत्यादि का उपयोग भी विभिन्न एथ्नोवेटेरिनरी मेडिसिन बनाने में किया जाता है।

ikjaifjd i'kq fpfdRlk dk dqN çpfyr mi;ksxh uqL[ks

FkuSyk jksx& 250 ग्राम देसी ग्वारपाठा के किनारे से काँटों को हटाकर छोटे–छोटे टुकड़ों में काटकर 50 ग्राम पिसी हुई हल्दी एवं 10 ग्राम चुना को मिक्सर/ग्राइंडर में पीस कर पेस्ट बना लें। इस पेस्ट के 8 बराबर हिस्से बनाकर दिन में 8 बार थनों पर लगाए।

eqg[kqj idk jksx& जीरा 10 ग्राम, मेथी 10 ग्राम व काली मिर्च 10 ग्राम को 1 घंटे के लिए 100 मिलीलीटर पानी में भिगो दें। 10 ग्राम पिसी हुई हल्दी एवं 4 पोथी लहसुन मिलाकर पीस लें। इसके पश्चात् 125 ग्राम गुड़ एवं 1 नारियल (कस कर) मिलाएं। यह बड़े जानवरों के लिए एक खुराक है एवं 4 भेड़–बकरियों के लिए पर्याप्त है। यह एक खुराक दिन में 3 बार ताजा बनाकर खिलाएं। यह उपचार 5 दिन तक करें। पैरों के घावों के लिए 10 ग्राम लहसुन, 1 मुट्ठी नीम के पत्ते, 1 मुट्ठी तुलसी के पत्ते 250 ग्राम नारियल के तेल में उबालकर ठंडा करें। एक सूखे साफ़ कपड़े से पैर साफ करके घाव ठीक होने तक लगाएं। घाव में कीड़े होने पर इसी तेल में कपूर मिलाकर लगाएं तथा कीड़े मरने पर कपूर रहित तेल लगाएं।

nLr yxuk& 100 ग्राम जीरा, 5 ग्राम हींग, 5 ग्राम काली मिर्च व 100 ग्राम मेथी को तवे पर गरम करने के बाद ठंडा करें एवं पीसकर पाउडर बना लें। एक प्याज, 4 पोथी लहसुन एवं एक मुठी कढ़ीपत्ता को मिलाकर पेस्ट बना लें। पिसा हुआ पाउडर एवं पेस्ट को मिलाकर 100 ग्राम गुड़ में मिलाकर गोली बनाकर पशु को खिलाएं। आवश्यकता पड़ने पर दूसरे दिन भी ताजा बनाकर खिलाएं।

—fe jksx@isV esa dhMs& 25 ग्राम जीरा, 10 ग्राम सरसों के बीज, 5 काली मिर्च के बीज को पीसकर, 5 पोथी लहसुन, 5 ग्राम पिसी हुई हल्दी, 50 ग्राम करेला एवं 100 ग्राम केले के तने को 150 ग्राम गुड़ में मिलाकर गोली बना लें। यह गोली पशु की जीभ पर रगड़ें। यह एक दिन की खुराक है। यह ताजा तैयार कर उपयोग करें।

Fkuksa esa ikuh mrjuk& तिल अथवा सरसों का 200 मिलीलीटर तेल गरम करके उसमे एक मुट्ठी हल्दी पाउडर एवं 2 कलियाँ बारीक़ कटा हुआ लहसुन डालें। मिश्रण को अच्छे से मिलाएं एवं सुगंध आने पर आँच से उतार लें (उबालने की आवश्यकता नहीं है) एवं ठंडा होने दें। इस

मिश्रण को प्रभावित थनों पर दबाव के साथ गोल घुमाते हुए लगाएं। इसे 3 दिन तक प्रतिदिन 4 बार प्रयोग करें। इस विधि को प्रयोग में लेने से पहले यह सुनिश्चित कर लें की पशु को थैनेला रोग नहीं है।

Fkuk ij pipd dk èkCc& एक घंटे के लिए 25 ग्राम जीरा भिगो लें एवं 10 पोथी लहसुन, 10 ग्राम पीसी हुई हल्दी, 25 ग्राम जीरा और 15 तुलसी के पत्तों को पीस लें । इस पेस्ट में 50 अलूणि घी (देसी मक्खन) मिलाकर पेस्ट बनायें। थनों को साफ करके, प्रभावित जगह पर इसको लगाएं। यह प्रत्येक बार ताजा बनाकर प्रयोग करें।

fppM& 10 ग्राम घोरबच (बाच), 10 पोथी लहसुन, एक मुट्ठी नीम के पत्ते, 20 ग्राम हल्दी और एक मुट्ठी काली तुलसी के पत्ते मिलाकर पीस लें। इसको 1 लीटर पानी में मिलाकर कपड़े से छान लें एवं इसको एक कपड़े में भिगोकर पशु के बालों में लगाएं। यह घोल अगले दिन आवश्यकता पड़ने पर भी लगाएं। यह हर बार ताजा बनाकर प्रयोग करें।

c[kkj& 10 ग्राम जीरा एवं 5 ग्राम काली मिर्ची को 1 घंटे के लिए 50 मिलीलीटर पानी में भिगो दें, 2 प्याज, 5 पान के पत्ते एवं 20 ग्राम कालमेघ के पत्ते एवं 100 ग्राम गुड़ मिलाकर उसका लड्डू बना लें एवं पशु की जीभ पर लगाएं। आवश्यकता पड़ने पर दूसरे दिन भी इसको ताजा बना कर प्रयोग करें।

tj ugh fxjuk& ब्याने के 2 घंटे के अंदर पशु को एक पूरी मूली खिला दें। अगर पशु ब्याने के 8 घंटे बाद तक भी जेर नहीं गिराता है तो 1.5 किलो ताजी भिंडी को नमक एवं गुड़ के साथ पशु को खिला दें। अगर पशु ब्याने के 12 घंटे बाद तक भी जेर नहीं गिराता है तो पशु के शरीर के एकदम पास में जेर में गांठ बांध दें और गांठ के 2 इंच नीचे से इसे काटकर छोड़ दें। गांठ पशु के शरीर के अंदर चली जाएगी। हाथों से जेर निकालने का प्रयास कभी भी नहीं करें। 4 सप्ताह तक, सप्ताह में एक बार पशु को एक मूली खिलाएं।

ck>iu dh leL;k& मद चक्र के पहले या दूसरे दिन उपचार शुरू करें। दिन में एक बार नीचे दिए गए क्रमानुसार गुड़ या नमक के साथ ताजा अवस्था में खिलाएं– 1 मूली रोजाना 5 दिन तक, ग्वारपाठा/धृतकुमारी की एक पत्ती रोजाना 4 दिन तक, एक मुट्ठी हडजोड़ के तने रोजाना 4 दिन तक, रोजाना 4 मुट्ठी करी पत्तियां हल्दी के साथ मिलाकर 4 दिन तक पशु को खिलाएं। अगर पशु ग्याभिन नहीं होता है तो यह उपचार एक बार फिर दोहराएं।

fu"d"k

- एलोपैथी दवाओं में हुई अत्यधिक प्रगति, आज की पीढ़ी के लोगों की एलोपैथी में बढ़ती हुई रूचि एवं विभिन्न आदिवासी एवं जनजातीय समुदायों में हुए सामाजिक, आर्थिक और व्यावसायिक परिवर्तनों के कारण विगत समय में नृवंश पशु चिकित्सा विज्ञान की पद्धतियों के ज्ञान में कमी आई है। लेकिन फिर भी सस्ते उपचार, स्थानीय स्तर पर आसानी उपलब्धता एवं दुष्प्रभाव रहित होने के कारण अभी भी नृवंश पशु चिकित्सा विज्ञान की पद्धतियों का महत्व अभी भी बना हुआ है।
- नृवंश पशु चिकित्सा विज्ञान की पद्धतियों का ज्ञान एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में मुख्यतः मौखिक रूप से ही प्रवाहित होता आया है। अच्छा होगा की इस ज्ञान का उचित एवं सम्पूर्ण रूप से दस्तावेजीकरण किया जाये ताकि आगे आने वाली पीढ़ियां भी इसके बारे में जाने एवं इसका भरपूर फायदा उठायें।
- औषधीय पौधों के इस जनजातीय ज्ञान की संपत्ति अनुसंधान और जानवरों की बीमारियों को ठीक करने के लिए नई दवाओं की खोज के लिए एक बड़ी क्षमता की ओर इशारा करती है। जिसका कि उचित दोहन किया जाना चाहिए ताकि लोगों को इसका भरपूर फायदा मिल सके।
- पशु चिकित्सा के लिए प्राकृतिक एवं औषधीय पौधों के प्रयोग एवं नृवंशविज्ञान पशु चिकित्सा पद्धतियों को बढ़ावा दिया जाना अति आवश्यक है।
- किसानों को चाहिए की वो परम्परागत फसलों के साथ–साथ पशु चिकित्सा में काम आने वाले औषधीय पौधों की भी कुछ मात्रा में पैदावार करें। ग्राम पंचायत स्तर भी खाली पड़ी हुई पंचायती जमीन पर तथा पशु चिकित्सालयों में भी पशु चिकित्सा में काम आने वाले औषधीय पौधों की खेती की जा सकती है।
- और अंत में, पता नहीं हम क्यों नृवंश चिकित्सा विज्ञान की पद्धतियों को "वैकल्पिक चिकित्सा" कहते हैं जबकि यही "असली चिकित्सा पद्धति" है जिसको की मनुष्य हजारों वर्षों से स्वंम और पशुओं के लिए प्रयोग करता आ रहा है। आधुनिक चिकित्सा पद्धति की खोज को तो अभी लगभग 100 वर्ष ही हुए हैं।

बरसीम- सर्दियों की एक पौष्टिक चारा फसल

सतपाल, रवीश पंचटा एवं सत्यवान आर्य

[1]चारा अनुभाग, अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग,
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा में किसान की आजीविका में पशुधन का महत्वपूर्ण स्थान है। पशुओं की दुग्ध उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के लिए संतुलित पशु आहार बहुत ज़रूरी है। पशु आहार में हरे चारे का बड़ा महत्व है। हरे चारे के अभाव में पशु कमजोर हो जाते हैं तथा उनका उत्पादन भी गिर जाता है यदि पशुओं को पौष्टिक हरा चारा मिलता रहे तो उनका स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है तथा उनके आहार पर दाना भी कम खर्च होगा परन्तु अप्रैल–जून व नवम्बर–दिसम्बर के महिनों में हरे चारे की काफी कमी हो जाती है। इसलिए कुछ अहतियात पहले से ही बरतने चाहिए ताकि किसान भाई अपने पशुओं को पूरे वर्ष हरा चारा उपलब्ध करवा सकें। पषु पालकों के पास खरीफ के हरे चारे, ज्वार मक्का, बाजरा व लोबिया तथा रबी के मौसम में बरसीम, जई, लुर्सन होते हैं।

सर्दियों में हरे चारे के रूप में बरसीम का एक महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि पशु आहार की दृष्टि से यह बहुत ही गुणकारी चारा माना जाता है। बरसीम के चारे में 18–22 प्रतिशत प्रोटीन की मात्रा होती है। बरसीम की एक विशेषता यह भी है कि इस फसल की कई बार कटाइयां ली जा सकती है और नवम्बर से मई तक इसका हरा चारा उपलब्ध रहता है। यह औसतन 20 किलोग्राम नत्रजन प्रति एकड़ प्रस्थापित करके भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाती है। इसलिए बरसीम की खेती को वैज्ञानिक पद्धति से उगाना अति आवश्यक है ताकि इसकी ज्यादा पैदावार ली जा सके। बरसीम के हरे चारे को सूखाकर उत्कृष्ट 'हे' में परिवर्तित किया जा सकता है।

mUur fdLe%

1- **eLdkoh%** यह बरसीम की पुरानी किस्म है और लगभग सारे उत्तर भारत में प्रचलित है। यह किस्म जल्दी फुटाव लेने वाली है तथा नवम्बर से मई तक 4–5 अच्छी कटाइयां दे देती है। इसकी औसत पैदावार 620–680 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है।

2- **fglkj cjlhe 1%** यह बरसीम की उन्नत किस्म है जिसकी हरियाणा प्रदेष में काश्त के लिए सिफारिश की गई है। यह किस्म मैस्कावी के मुकाबले अधिक पत्तेदार, जल्दी बढ़वार एवं अच्छी गुणवत्ता वाली और 8–10 दिन अधिक हरी रहने वाली किस्म है। यह किस्म 700–740 क्विंटल प्रति हैक्टेयर हरा चारा और 90–100 क्विंटल प्रति हैक्टेयर शुष्क चारा देती है। यह किस्म तना गलन एवं जड़ गलन रोगों की प्रतिरोधी है।

3- **fglkj cjlhe 2%** यह बरसीम की नई उन्नत किस्म है जिसकी हरियाणा प्रदेश में काश्त के लिए सिफारिश की गई है। यह किस्म मैस्कावी व हिसार बरसीम 1 के मुकाबले अधिक पत्तेदार, जल्दी बढ़वार एवं अच्छी गुणवत्ता वाली व अधिक दिन हरी रहने वाली किस्म है। यह किस्म 780–800 क्विंटल प्रति हैक्टेयर हरा चारा और 100–110 क्विंटल प्रति हैक्टेयर शुष्क चारा देती है। यह किस्म तना गलन एवं जड़ गलन रोगों के प्रति जयादा प्रतिरोधी है।

feêh% मध्यम से भारी मिट्टी बरसीम की फसल के लिए उपयुक्त होती है। यह फसल लवण सहनशील भी है और इसे हल्की खारी जमीन में भी उगाया जा सकता है। हल्की व रेतीली मिट्टी में बरसीम को नही लगाना चाहिए।

fctkbZ dk le;% बरसीम की फसल के लिए सितम्बर के आखिरी सप्ताह से लेकर अक्तूबर का पूरा महीना सर्वोतम माना गया है। पछेती बिजाई करने पर इसके हरे चारे की पैदावार कम हो जाती है इसलिए इसकी समय पर बिजाई कर देनी चाहिए।

cjlhe dk Vhdkdj.k% बरसीम की अधिक बढ़वार व पैदावार लेने हेतू इसके बीज को एक खास किस्म के

*Corresponding author: satpal_fpj@hau.ac.in

जीवाणुओं राइज़ोबियम कल्चर से बिजाई से पहले टीकाकरण करना चाहिए। राइज़ोबियम कल्चर के पैकेंट चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के माइक्रोबायोलोजी विभाग से प्राप्त किए जा सकते हैं।

टीकाकरण के लिए 50 ग्राम गुड़ को आधे लीटर पानी में घोल लें। एक एकड़ के बीज (8–10 किलो) को फर्श पर डालकर ऊपर से गुड़ का घोल डाले और साथ में एक पैकेट कल्चर भी छिड़क दें। अब बीज को हाथ से अच्छी तरह मिला दें ताकि हर बीज पर जीवाणु चिपक जाए। राइजोबियम के इस टीके को गुड़ के घोल में भी मिला सकते हैं। उपचार के बाद बीज को छाया में सुखाकर खेत में बिजाई कर दें।

cht dh ek=k o fctkbZ% एक एकड़ खेत के लिए 8–10 किलो बीज को एक प्रतिशत नमक के घोल में डालकर रखना चाहिए ताकि हल्के बीज व 'कासनी' खरपतवार के बीजों को बरसीम से अलग किया जा सके।

पहली कटाई से अधिक तथा उत्तम किस्म का हरा चारा लेने के लिए बरसीम को जापानी सरसों या चाइनीज़ कैबेज के साथ मिलाकर बोना चाहिए। मिश्रित फसल में बरसीम के 8 किलो बीज के अतिरिक्त 500 ग्राम जापानी सरसों या चाइनीज़ कैबेज बीज एक एकड़ के लिए काफी हैं। बरसीम को छिड़का विधि द्वारा बोया जाता है।

[kkn dh ek=k% बरसीम फसल में 10 किलो नाइट्रोजन व 28 किलो फास्फोरस प्रति एकड़ के हिसाब से बिजाई से पहले डालनी चाहिए। बाद में बरसीम खुद ही वातावरण से नाइट्रोजन लेती रहती हैं।

flapkb;k% बरसीम में पहली सिंचाई बहुत महत्वपूर्ण है अतः यह जल्दी ही कर देनी चाहिए। हल्की मिट्टी में प्रथम सिंचाई बिजाई के 3–5 दिन में तथा भारी मिट्टी में 8–10 दिन बाद अवश्य कर देनी चाहिए क्योंकि प्रथम सिंचाई का बरसीम की बढ़वार में विशेष योगदान होता है। अन्य सिंचाइयां मौसम के अनुसार 15–20 दिनों के अन्तराल पर करनी चाहिए। अधिक तापमान पर अक्तूबर में भी सिंचाइयां 10–15 दिन के अन्तराल पर करनी चाहिए। बरसीम में नमी की कमी बिल्कुल भी नहीं होनी चाहिए क्योंकि पानी की कमी का सीधा असर हरे चारे की पैदावार पर पड़ता है।

dVkb;k% बरसीम की फसल 60 दिन के बाद पहली कटाई के लिए तैयार हो जाती है। इसके बाद की कटाइयां 40 दिनों के अंतराल पर सर्दियों में तथा 30 दिन के अंतराल पर बंसत के दिनों में करें। इस प्रकार से बरसीम में 5–6 कटाइयां ली जा सकती है।

cht r|;kj djuk% बीज तैयार करने के लिए बरसीम से कासनी तथा अन्य अवांछित पौधों को निकाल देना चाहिए। 25 मार्च के आसपास अन्तिम कटाई लेने के बाद एक सिंचाई तुरन्त कर देनी चाहिए। दूसरी सिंचाई 20 दिन बाद कर देनी चाहिए। बरसीम का बीज मई के अन्त में पक कर तैयार होता है और इसकी पैदावार लगभग 2 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

gkfudkjd dhMk dh jkdFkke%

dkyh phVh% यह चींटी अंकुरित होने वाले बीजों को उठा ले जाती है। इसकी रोकथाम के लिए चींटीया के रहने वाले स्थान पर मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत धूड़े का भुरकाव करें।

lQn xkl gkij% यह कीड़ा अप्रैल माह में बरसीम की बीज वाली फसल पर आक्रमण करता है। इसकी रोकथाम के लिए 400 मिली लीटर मैलाथियान 50 ई.सी. को 300 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड की दर से छिड़काव करें।

chekfj;k% बरसीम में मुख्यतः तना गलन रोग का प्रकोप होता है। यह रोग फफूंद के कारण होता है जो कि बीज या जमीन में मौजूद रहती है। यह तने के निचले हिस्से पर आक्रमण करता है जिसके फलस्वरूप तना सड़ना आरम्भ हो जाता है। इसकी रोकथाम के लिए तना गलन प्रतिरोधी किस्म एच.बी. 2 का प्रयोग करना चाहिए तथा रोगमुक्त खेत का चुनाव करना चाहिए और रोगवाले खेत को गर्मी में पानी से भर देना चाहिए ताकि इसमें वर्तमान फफूंद नष्ट हो जाये। यदि फसल में बीमारी दिखाई देने लगे तो 0.1 प्रतिशत बाविस्टिन के घोल से भूमि को सिंचित करें। इस कार्य के लिए 10 लीटर घोल एक वर्ग मीटर क्षेत्र के लिए पर्याप्त होता है।

नवजात पशुओं में काफ स्कोर (सफेद दस्त)

वंदना भनोट[1], पवनजीत सिंह चीमा[2] एवं देवेन्द्र सिंह[3]*

[1]पशु रोग जांच प्रयोगशाला अम्बाला, [2]पशु रोग जांच प्रयोगशाला सिरसा, [3]हरियाणा पशु विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

सफेद दस्त/काफ स्कोर नवजात बछड़े/बछड़ियों व कटड़े/कटड़ियों में बैक्टीरियाए वायरस व परजीवी से होने वाला रोग है। प्रायः 1 से 15 दिन के नवजात पशुओं में ई. कोलाई नामक कीटाणु से होता है। कीटाणु बछड़ा/बछड़े की आंत पर हमला करते है जिससे पशु को दस्त लग जाते हैं। अधिक संक्रमण होने पर नवजात पशु मर भी जाता है। इस रोग में पशु को ढीले पतले दस्त लग जाते है आखें धस जाती हैं और बाल खुरदुरे हो जाते हैं। बछड़े/बछड़ी के भूख कम लगती है व कमजोरी के कारण खड़े होने में परेशानी होती है।

y{k.k

1 बदबूदार पतला दस्त आमतौर पर सफेद व कभी–कभी झागदार भी होते हैं।

2 पशु को भूख कम लगना व सुस्त हो जाना

3 खड़े होने में अनिच्छुक

4 आँखें धसी हुई

5 त्वचा रूखी व बिना लेचदार महसूस होती है

6 निर्जलीकरण (शरीर में पानी की कमी)

dkj.k

1 नवजात पशु को समय पर खीस न पिलाने के कारण यह रोग उत्पन्न हो जाता है या किसी कारण से बछड़े/बछड़ियों की रोग प्रतिरोधक शक्ति कम हो गई हो

2 गदा वातावरण

3 गंदे/दूषित बर्तन मे दूध पिलाने पर

4 खराब रखरखाव

5 अत्याधिक ठण्ड

bykt o jksdFkke &

1 यह रोग वेजाइनल डिस्चार्ज, नाभि के संक्रमण से भी नवजात पशु में इन्फेक्शन हो सकता है इसलिए गाय/भैंस के ब्याने के स्थान की पूरी सफाई रखें।

2 नवजात पशु में रोग प्रतिरक्षा प्रणाली का निर्माण हो रहा है इसलिए बछड़े/बछड़ियों के जीवन में गाय/भैंस से खीस प्राप्त करना बेहद महत्वपूर्ण है। खीस में प्रोटीन जो शरीर के पोषण तथा रोग निरोधक क्षमता को बनाने के लिये आवश्यक है। ब्याने के तीन घन्टे के अन्दर नवजात को खीस पिलाना लाभदायक है।

3 यह रोग दूषित आहार व पानी से फैलता है इसलिए साफ सफाई का अत्याधिक ध्यान रखें।

4. ज्यादातर इस रोग का संक्रमण एक से अधिक कारकों से होता है परन्तु नैदानिक तस्वीर/लक्ष्ण एक समान होते है– तीर्व निर्जलीकरण के साथ दस्त। बछड़े/बछड़ी की मृत्यु निर्जलीकरण के कारण होती है, इसलिए पानी की कमी न होने दें। ओरल फ्लुइड थेरेपी व इलेक्ट्रोलाइटस युक्त मौखिक तरल पदार्थ से हाइड्रेट करें। कृमि होने के सन्देह पर पिपराजीन कृमिनाशक दवा पिलाएं। गोबर की जांच करवाने के बाद पशुचिकित्सक के परामर्श से एंटीबायोटिक दें।

*Corresponding author: drdev18@gmail.com

शुष्क क्षेत्र में मारवाड़ी नस्ल की बकरी का पालन

निष्ठा यादव, मंजू नेहरा और प्रकाश

पशु आनुवंशिकी एवं प्रजनन विभाग

पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर

बकरी को लोकप्रिय रूप से गरीब आदमी की गाय कहा जाता है क्योंकि बकरी पालन ग्रामीण क्षेत्रों में आबादी के एक बड़े हिस्से के लिए एक बड़ी आर्थिक सहायता का स्रोत है। बकरी की मारवाड़ी नस्ल थार रेगिस्तान के भौगोलिक क्षेत्र के अनुकूल नस्ल है। यह नस्ल राजस्थान के मारवाड़ क्षेत्र में और पड़ोसी राज्य गुजरात व मध्यप्रदेश में पाई जाती है। नस्ल का नाम राजस्थान के 'मारवाड़' क्षेत्र के नाम पर पड़ा है, जो कि इसका प्राकृतिक आवास है जिसमें जोधपुर, पाली, नागौर, बीकानेर, जालोर, जैसलमेर और बाड़मेर जिले शामिल हैं।

मारवाड़ी बकरी को छोटे और बड़े दोनों झुंडों में पाला जाता है मारवाड़ी बकरियों के बड़े झुंड मार्च–अप्रैल में अपने सुस्थापित मार्गों से कई दिशाओं में पलायन करना शुरू कर देते हैं और वे आमतौर पर जुलाई में वापस लौटते हैं।

ekjokM+h cdjh dh fo'ks"krk,¡%

- मारवाड़ी बकरियां मध्यम आकार के जानवर हैं जो मुख्य रूप से काले रंग के होते हैं। लेकिन भूरे और सफेद निशान वाली बकरियां भी पाई जाती हैं।
- उनके लंबे बाल (10–12 सेमी.) होते हैं। एक बकरी से वर्ष में औसतन 300 ग्राम बाल प्राप्त होते हैं।
- उनके लंबे और झुके हुए कान होते हैं।
- वयस्क मादा बकरी का औसतन वजन 25 किग्रा. एवं नर बकरे का वजन 35 किग्रा. होता है।
- बक (नर) और डो (मादा) दोनों में मध्यम लंबाई के सींग होते हैं।

mi;ksx%

- मारवाड़ी एक परिपक्वता आयु जल्दी प्राप्त करने वाली नस्ल है क्योंकि यौवन की औसत आयु 306 दिन हैं।
- यह एक ट्रिपलप्रयोजन बकरी की नस्ल है जो मांस, दूध और बाल के लिए पाली जाती है।
- मारवाड़ी बकरियां बहुत कठोर और मजबूत जानवर हैं। वे थार रेगिस्तान के कठोर वातावरण के अनुकूल हैं।
- वे अपने गर्म और ठंडे मौसम सहनशीलता के लिए जाने जाते हैं।
- उनकी रोग प्रतिरोधक शक्ति और बहुत कठोर पोषण स्थितियों में अच्छी तरह अनुकूलन क्षमता के लिए जाना जाता है।
- मारवाड़ी बकरी में मुख्य रूप से एकल जन्म होता है, जिसमें जुड़वां प्रतिशत लगभग 10 प्रतिशत होती है।

vf[ky Hkkjrh; lefUor vuql/kku ifj;kstuk& यह परियोजना मारवाड़ी बकरी सुधार के लिये भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने शुरू की थी। इस परियोजना के निम्नलिखित उद्देश्य हैं:

- बकरी पालकों की आजीविका और खाद्य सुरक्षा बढ़ाने के लिए।
- बकरी की नस्ल का सुधार करना।
- देश के बकरी आनुवंशिक संसाधनों की उनके आवास में उत्पादकता बढ़ाना।
- बेहतर बकरी उत्पादन और स्वास्थ्य के लिए क्षेत्र में प्रजनन, भोजन और स्वास्थ्य नियंत्रण प्रौद्योगिकियों को कार्यान्वित करना।

ifj;kstuk dk fooj.k% बकरे पालन केंद्र, पशुधन अनुसंधान केंद्र, राजस्थान के कोडेमदेसर में कार्यरत है। इकाई कवरेज के तहत कम से कम 1000 प्रजनन योग्य बकरी वाले 6 केंद्रों का रखरखाव कर रही है। विभिन्न क्षेत्र इकाइयाँ दईया, देसनोक, कल्याणसर, कान सिंह की सिरद, रायसर और जयमलसर आदि गांवों में कार्यरत हैं। राजूवास की संस्थागत इकाई द्वारा पंजीकृत किसानों को बेहतर जर्मप्लाज्म के प्रजनन योग्य पशु निशुल्क वितरित किये जाते है। दो या तीन प्रजनन काल में इनब्रीडिंग से बचने के लिए बकरे को इन समूहों में स्थानांतरित किया जाता है या नस्ल सुधार के लिए गोद लिए गए क्षेत्र के बाहर बेचा जाता है। यह मारवाड़ी बकरी की नस्ल सुधार में तथा किसानों के लिए आय के स्रोत के रूप में मददगार है। स्वास्थ्य और टीकाकरण (खुरपाका– मुहपका, एंट्रोटॉक्सिमिया, बकरी की पट्टिका, रक्तस्रावी सेप्टीसीमिया) सेवाएं प्रदान की जाती हैं।

*Corresponding author: nisthayadav145@gmail.com

पशु कल्याणः एक परिचय

अमनदीप, दिपिन चंद्र यादव और देवेंद्र सिंह बिढाण

पशु उत्पादन प्रबंधन विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

पशु स्वास्थ्य के लिए विश्व संगठन (ओ. आई. ई.) पशु कल्याण को इस प्रकार परिभाषित करता हैः जानवरों की शारीरिक और मानसिक स्थिति उन परिस्थितियों के संबंध में जिसमें वह रहता है और मर जाता है। पशु कल्याण एक जटिल और बहुआयामी विषय है, जिसमें वैज्ञानिक, नैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक आयाम शामिल हैं। पशु व्यवहार शारीरिक गतिविधियों की शारीरिक अभिव्यक्ति को संदर्भित करता है जो एक आंतरिक प्रेरणा के परिणामस्वरूप होता है। किसी भी क्षण में किया गया व्यवहार अक्सर कई अलग–अलग प्रेरणाओं का परिणाम होता है।

व्यवहार के माध्यम से पशु कल्याण विज्ञान किसी जानवर के अनुभवों के बारे में अनुमान लगा सकता है। इस कारण से, व्यवहार हाल के कल्याण मूल्यांकन की जाने वाली प्रमुख विशेषताओं में से एक है। व्यवहार भी जानवरों के बीच बातचीत के लिए मूल है। यह वह तंत्र है जिसके द्वारा एक जानवर दूसरे को प्रभावित करता है और यह वह तरीका है जिसके द्वारा एक प्रजाति के सदस्यों के बीच और कभी–कभी प्रजातियों के बीच जरूरतों और इरादों को संप्रेषित किया जाता है। इसलिए व्यवहार पशु की जरूरतों को पूरा करने में प्रत्यक्ष भूमिका निभाता है।

मोटे तौर पर पशु कल्याण संबंधी चिंताएं चार मुख्य शिविरों में आती हैं :

1- **tkuojksa ds thou ds ckjs esa uSfrd fpark,a%** सबसे पहले, पशु कल्याण संबंधी चिंताएं जानवरों के जीवन के बारे में नैतिक या नैतिक चिंताओं के कारण होती हैं। जैसा कि यह अक्सर इस विश्वास पर केंद्रित होता है कि जानवर संवेदनशील होते हैं, और इस प्रकार हमारा कर्तव्य है कि हम उनकी देखभाल करें और उन्हें नुकसान से बचाएं।

2- **ekuo LokLF; vkSj i'kq mRiknksa dh xq.koÙkk lca/kh fpark,a%** कृषि पशु कल्याण के लिए चिंता इन जानवरों से मानव स्वास्थ्य और उत्पाद की गुणवत्ता के बारे में चिंताओं के कारण भी हो सकती है, और इस विश्वास से जुड़े हैं कि खेत पर जानवरों के जीवन में सुधार से मानव के लिए संबद्ध लाभ होंगे। यह विशेष रूप से हानिकारक बैक्टीरिया की उपस्थिति के लिए समर्थित हो सकता है, जो गहन आवास वातावरण में अधिक प्रचलित हो सकता है और मानव स्वास्थ्य के मुद्दों का कारण भी बन सकता है। गहन पशुपालन में एंटीबायोटिक दवाओं का व्यापक उपयोग भी मानव स्वास्थ्य के लिए एक मुद्दा हो सकता है क्योंकि बढ़ी हुई रोगाणुरोधी प्रतिरोध मानव और पशु स्वास्थ्य को प्रभावित कर सकती है।

3- **i;kZoj.k vkSj tSo fofo/krk lca/kh fpark,a%** पर्यावरण और जैव विविधता संबंधी चिंताओं में पशु कल्याण के लिए चिंताएं भी शामिल हो सकती हैं, जहां पशु कल्याण को इस चिंता के पैकेज के हिस्से के रूप में देखा जाता है कि हम ग्रह के साथ कैसा व्यवहार करते हैं। यह ग्रह पर सभी प्राणियों को शामिल करने वाले ग्रहों के स्वास्थ्य के समग्र दृष्टिकोण का हिस्सा हो सकता है, या एक विशिष्ट दृष्टिकोण, जैसे कि जैविक खेती, जो पर्यावरण और पशु कल्याण दोनों को परिभाषित कृषि अभ्यास के हिस्से के रूप में मानता है।

4- **i'kq mRiknksa dk O;kikj vkSj foi.ku%** अंत में, पशु कल्याण चिंताओं को व्यापार और विपणन चिंताओं के हिस्से के रूप में देखा जा सकता है, या तो जहां इन मुद्दों के प्रभाव के कारण उत्पन्न होने वाले पशु कल्याण के लिए चिंता है, या जहां पशु कल्याण का

*Corresponding author: aghanghas1231@gmail.com

उपयोग किया जा सकता है उच्च कीमतों का लाभ उठाने के लिए एक विपणन उपकरण के रूप में।

ikp Lor=rk,¡ vktknh% पशु कल्याण की सबसे पुरानी और सबसे प्रसिद्ध परिभाषा पांच स्वतंत्रताएं हैं। फाइव फ्रीडम की शुरूआत 1979 में फार्म एनिमल वेलफेयर काउंसिल द्वारा यूनाइटेड किंगडम में एक विचार के रूप में हुई थी। पांच स्वतंत्रताएं/आजादी हैं :

1 **Hkw[k vkSj I;kI Is vktknh&** पूर्ण स्वास्थ्य बनाए रखने के लिए पानी और आहार द्वारा

2 **vlqfo/kk Is vktknh&** एक उपयुक्त वातावरण प्रदान करके

3 **nnZ] pksV vkSj chekjh Is vktknh&** रोकथाम या शीघ्र निदान द्वारा

4 **IkekU; O;ogkj dks O;Dr djus dh vktknh&** अपनी तरह की प्रजातियों की जगह, सुविधाएं और कंपनी प्रदान करके

5 **Hk; vkSj IadV Is vktknh&** मानसिक पीड़ा से बचने के लिए स्थितियां और उपचार सुनिश्चित करके पांच स्वतंत्रताएं मुख्य पशु कल्याण के सभी तीन पहलुओं को कवर करती हैं: जैविक कार्यप्रणाली (उदाहरण के लिए बीमारी या कुपोषण से आजादी), प्राकृतिक जीवन (उदाहरण के लिए सामान्य व्यवहार व्यक्त करने की स्वतंत्रता), और पशु भावनाएं (उदाहरण के लिए भूख से आजादी)।

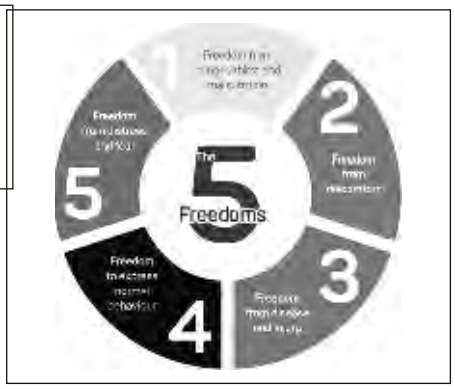

हालांकि पशु कल्याण एक जानवर की संपत्ति है, इसकी व्यक्तिपरक स्थिति, हमारी व्यक्तिगत नैतिक सोच यह प्रभावित कर सकती है कि हम जानवरों के प्रति व्यवहार कैसे चुन सकते हैं।

ऐसे कई संगठन हैं जो पशु कल्याण को एक विशेष आवाज देते हैं। इनमें विश्व पशु स्वास्थ्य संगठन जैसे अंतर–सरकारी संगठन शामिल हैं, जो पशु कल्याण के लिए वैश्विक मानक निर्धारित करते हैं। अन्य प्रसिद्ध संगठनों में यूनिवर्सिटी फेडरेशन फॉर एनिमल वेलफेयर (यूएफएडब्ल्यू), वर्ल्ड एनिमल प्रोटेक्शन, कम्पैशन इन वर्ल्ड फार्मिंग (सीआईडब्ल्यूएफ) और इंटरनेशनल फंड फॉर एनिमल वेलफेयर (आईएफएडब्ल्यू) शामिल हैं। प्रत्येक देश में राष्ट्रीय संगठन भी होंगे, जैसे कि भारतीय पशु कल्याण बोर्ड, यूके में रॉयल सोसाइटी फॉर द प्रोटेक्शन ऑफ एनिमल्स (आरएसपीसीए) और यूएसए में ह्यूमेन सोसाइटी। ये निकाय पशु प्रबंधन के लिए अधिक नैतिक दृष्टिकोण को बढ़ावा देने के लिए काम करते हैं, और परिवर्तन के लिए सरकारों को बढ़ावा देने या उनकी पैरवी करने के लिए उनकी अपनी विशेष नीतियां हैं।

पशुओं के आहार में नमक का महत्व

रेणु कुमारी, संजय सिंह, गीतेक्ष मिश्र

[1]सहायक आचार्य, पशु पोषण विभाग, [2]सहायक आचार्य, पशुधन उत्पाद प्रौद्योगिकी,
[3]सहायक आचार्य, पशुधन उत्पादन प्रबंधन, आई.आई.वी.ई.आर. रोहतक, हरियाणा

पशुओं द्वारा खाया जाने वाला साधारण नमक दो तत्वों एवं सोडियम एवं क्लोराइड से मिलकर बनता है और अंग्रेजी भाषा में इसे सोडियम क्लोराइड कहते हैं। इन दोनों तत्वों की पशुओं को आवश्यकता होती है। शरीर में 0.2 प्रतिशत सोडियम होता है। शरीर में सोडियम हड्डियों, कोमल ऊतकों और शारीरिक द्रव्यों में पाया जाता हैं। शारीरिक माध्यम में अम्ल–क्षार सन्तुलन बनाये रखने के लिए भी नमक की आवश्यकता पड़ती है। नमक आंत में एमीनो एसिड और शर्करा के अवशोषण के काम आता है। मांसपेशियों में अनुबंध करने की क्षमता सोडियम की मात्रा पर निर्भर करती है। पशुओं को नमक आहार के विभिन्न खाद्य पदार्थों द्वारा और नमक खिलाने से प्राप्त होता है।

शरीर में होने वाली चयापचन की क्रियाओं में काम आने के पश्चात् नमक का शरीर से उत्सर्जन भी होता है। नमक पशुओं को आहार खाने में चाव भी उत्पन्न करता है। नमक से लार निकलने में सहायता मिलती है और लार से आहार के पचने में प्रोत्साहन मिलता है। पाचन में हाइड्रोक्लोरिक अम्ल सहायक पाया जाता है और साधारण नमक में अधिक मात्रा में पाया जाने वाला क्लोराइड इसके बनने में सहायक होता है। कम मात्रा में नमक खाये जाने पर इसका (उत्सर्जन) कम और अधिक मात्रा में खाये जाने पर इसका उत्सर्जन अधिक होता है। पशु शरीर से नमक के बाहर निकलने उत्सर्जन का नियंत्रण गुर्दों द्वारा किया जाता है।

i'kq 'kjhj esa ued dh deh ds y{k.k

अधिक समय तक आहर में पशु को नमक न मिलने पर पशु उसके आस–पड़ोस में पड़े कपड़े, लकड़ी एवं मलमूत्र आदि वस्तुओं को खाने और चाटने लगता है। परीक्षणों द्वारा वैज्ञानिकों ने ज्ञात किया है कि जिन गायों को नमक नहीं खिलाया जाता है, उनकी भूख दो–तीन सप्ताह में कम हो जाती हैं नमक की कमी से पशु आहार की प्रोटीन एवं उर्जा का प्रयोग ठीक से नहीं होता। परिणामस्वरूप पशु का शारीरिक भार कम हो जाता है और दूध देने वाले पशुओं के दूध उत्पादन में कमी आ जाती है। अधिक मात्रा में दूध देने वाली गायों में नमक की कमी के लक्षण जल्दी एवं स्पष्ट रूप से प्रकट होते हैं क्योंकि दूध के द्वारा उनके शरीर से नमक बाहर निकल आता है और इस कमी को पूरा करने के लिये आहार द्वारा नमक पशु को प्राप्त नहीं होता है। नमक की हीनता अर्थात् कमी के लक्षण प्रकट होने में पशु को लगभग एक वर्ष का समय लग जाता है।

कुक्कुटों के आहार में पर्याप्त समय तक नमक की कमी से उनकी वृद्धि दर रूक जाती है और अण्डा देने वली मुर्गियों मे अण्डा उत्पादन कम हो जाता है। आहार में नमक की पर्याप्त समय तक कम से कुक्कुट में एक–दूसरे के पंख नोंचने की भी आदत पड़ जाती है।

fofHkUu i'kqvksa dks ued dh vko';drk (एन.आर.सी 2001)

fuokgu dh fy,	lkfM;e dh ek=k
दूध न देने वाले पशुओं के लिए	1.67 ग्रा. / 100 किलो भार
दूध देने वाले पशुओं के लिए	4.22 ग्रा. / 100 किलो भार
बढ़ोतरी के लिये	1.56ग्रा. / किलो भार प्रतिदिन बढ़ने वाले जिनका भार 150 –600 किलो हो
गर्भावस्था के लिये	1.54 ग्रा. / दिन, 190–270 दिन के गर्भावस्था के लिये
वातावरण का तापमान	25–30°C 0.11 ग्रा. / 100 किलो भार 30 °C 0.44 ग्रा. / 100 किलो भार

*Corresponding author: geeteshmishra09@gmail.com

?kqyu'khy ued dh ek=k		çHkko
1000	0.1	कोई दुष्प्रभाव नहीं
1000–2900	0.1–0.3	सामान्यतः कोई दुष्प्रभाव नहीं पर कभी–कभी दस्त लगते
3000–4900	0.3–0.5	दस्त लगते हैं और दूध की मात्रा में कमी आती है
5000–6900	0.5–0.7	इस पानी को नहीं देना चाहिये बहुत ज्यादा दुष्प्रभाव दूध देने वाले व गर्भधारण करने वाले पशुओं पर डालता है।

ued çkfIr ds lkr

आहार में सम्मिलित सभी खाद्य पदार्थों में नमक की कुछ न कुछ मात्रा पाई जाती है। परन्तु इसकी अधिक मात्रा समुद्र से प्राप्त होने वाले खाद्य पदार्थों में और मांस में पाई जाती है। कुछ आवश्यकता की शेष मात्रा की पूर्ति साधारण नमक को दाने में मिलाकर अथवा ईंट के रूप में चाटने के लिए पशु के सामने रखकर पूरी की जाती है। चारागाह में पशुओं को साधारण सूखे की अपेक्षा दो गुनी मात्रा में नमक प्राप्त हो जाता है। अधिक कच्चापन की दशा में हरे चारों से नमक अधिक प्राप्त होता है। साइलेज से भी अधिक मात्रा में नमक पशुओं को मिलता रहता है।

एक युवा पशु गाय अथवा भैंस को एक दिन में साधारणतः लगभग 13 ग्राम साधारण नमक की आवश्यकता होती हैं। वैज्ञानिकों ने ज्ञात किया है कि 500 किलोग्राम प्रति ब्यांत दूध देने वाली गाय को लगभग 30 ग्राम नमक की प्रतिदिन आवश्यकता पड़ती है। गोवंश, भैंस, बकरियों एवं भेड़ों के दाने में नमक की मात्रा 1.0 प्रतिशत की दर से मिलाई जाती हैं। कुक्कुटों के दाने में 0.5 प्रतिशत की दर से मिलाया जाता है।

ued dh vko';drk dks çHkkfor djus okys dkjd

1 आहार का प्रकार, पशुओं की नमक की जरूरत पर एक बड़ा प्रभाव डालता है।

2 पानी में सोडियम क्लोराइड और अन्य खनिज लवणों का स्तर एक और महत्वपूर्ण कारण है।

3 पशु का आमतौर पर शुष्क पदार्थ से 2–3 गुणा ज्यादा पानी की आवश्यकता होती है।

4 वातातावरण का तापमान और नमी एक मुख्य कारण हो सकती हैं। एक खोज में यह देखा गया हैं कि अगर खाने में 1.5 प्रतिशत पोटेशियम है तो दूध ज्यादा मात्रा में बनता है। पोटेशियम की मात्रा सोडियम और क्लोराइड की मात्रा पर प्रभाव डालती है।

5 गर्मी के तनाव में पशु में बहुत मात्रा में सोडियम की कमी आ जाती है।

पशु द्वारा नमक को खाई जाने वाली अधिकतम मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि पशु को कितना पानी प्राप्त हो रहा है। यदि पानी की असीमित मात्रा उपलब्ध हो तो पशु नमक की बहुत अधिक मात्रा को भी सहन कर सकता है। और आवश्यकता से अधिक खाया गया नमक पेशाब द्वारा पशु के शरीर से बाहर निकल जाता है। पानी की मात्रा प्राप्त होने पर आहार में मात्र 2.2 प्रतिशत नमक से भी विषैला प्रभाव प्रकट होता है। इसके प्रमुख लक्षण अधिक प्यास लगना और मांसपेशियों की कमजोरी है। कुक्कुटों के चूजों के आहार में 2.2 प्रतिशत से अधिक नमक होने पर उन पर कुप्रभाव पड़ता है। कुक्कुट आहर में नमक की मात्रा यदि 4.0 प्रतिशत से अधिक हो तो असीमित मात्रा में पानी उपलब्ध होने पर भी उनकी मृत्यु होने लगती है। पशु आहार में खिलाये जाने वाले नमक की मात्रा पशु के निकलने वाले पसीने पर भी निर्भर करती हैं। प्रयोगों द्वारा ज्ञात हुआ है कि एक घंटे तक पशु का पसीना निकलने पर लगभग 2 ग्राम सोडियम की हानि हो जाती है। अतः अधिकतम उत्पादन लेने के लिये और पशु को स्वस्थ्य बनाए रखने के लिए आवश्यक है कि पशु के शरीर से होने वाली नमक की हानी और आहार से प्राप्ति के बीच सन्तुलन बनाये रखा जाये।

मनुष्य में पशुओं से होने वाले दूध जनित रोग व उनसे बचाव

वंदना भनोट[1], पल्लवी मुदगिल[2] व स्वाति रूहिल[3]*

[1]पशु रोग जांच प्रयोगशाला, अम्बाला

[2]वी.पी.एच.ई., लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

[3]हरियाणा पशु विज्ञान केन्द्र, करनाल

दूध सभी प्रकार के पोशक तत्वों से युक्त होने के कारण रोगाणुओं के लिए एक उत्कृष्ट माध्यम के रूप में कार्य करता है। बैक्टीरिया/कीटाणुओं में दूध के विभिन्न घटकों को प्रयोग कर बढ़ने और गुणा करने की क्षमता होती है। इस प्रक्रिया/प्रणाली के दौरान कीटाणु कुछ मेटाबोलाइट्स जैसे लैक्टिक और अन्य कार्बनिक अमल, गैस, एंजाइम और विशाक्त पदार्थ छोड़ते हैं जो दूध की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं और इन्हें उपभोग के लिए अनुपयुक्त बनाते हैं। इस कारण से कच्चा दूध स्वभाविक रूप से हानिकारक होता है और इसका सेवन नहीं करना चाहिए। भारत के कई भागों में अनभिज्ञता के कारण कच्चे दूध पीने का प्रचलन है।

jksx tudks dk fofHkUu L=ksr&

विभिन्न प्रकार के रोगजनक कई स्त्रोतों से दूर तक पहुंच सकते हैं और विभिन्न प्रकार की दूध जनित बीमारी का कारण बन सकते हैं। दूध और दूध से बने उत्पाद कीटाणु या उनके जहरीले मेटाबोलाइट्स को उपभोक्ताओं तक ले जा सकते हैं जिन्हें विशाक्त टॉक्सिन कहा जाता है।

1- **i'kq&** डेयरी पशुओं का स्वास्थ्य बहुत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि ब्रूसेलोसिस, सालमोनेलोसिस, स्टेफाइलोंकोकल और स्ट्रैप्टॉकोकल संक्रमण आदि कई बीमारियां दूध के माध्यम से मनुष्य में आ सकती है। इन रोगों को पैदा करने वाले कीटाणु या तो सीधे थन से या परोक्ष रूप से संक्रमित शरीर के निर्वहन के माध्यम से दूध में प्रवेश कर सकता है।

2- **i'kqikyd@i'kq dk dke djus okyk&** रोगाग्रस्त व्यक्ति दूषित हाथों से या दूध दुहने के दौरान खांसने, छींकने, बात करने से कई बीमारियां जैसे टाइफाइड बुखार, स्कार्लेट ज्वर, डिप्थीरिया आदि बीमारियां प्रसारित कर सकता है।

3- **i;kZoj.k&** डेयरी फॉर्म/पशु घर का पर्यावरण भी उत्पादन और प्रसंस्करण के विभिन्न चरणों में दूध व दूध उत्पादों में रोगजनकों का प्रवेश करवा सकता है। कुछ सामान्य वायु जनित रोगजनक कीटाणु जैसे कोरानीबैक्टेरियम, डिप्थीरिया, माइकोबैक्टीरियम आदि वातावरण से दूध में प्रवेश कर जाते हैं। दूषित पानी, चारा और खराब बर्तन दूध में रोगजनक कीटाणु पहुंचाने का काम करते हैं।

*Corresponding author: dr.swati.ruhil@gmail.com

दूध जनित प्रमुख बैक्टीरियल/कीटाणु जनक इस प्रकार रोग है–

1- **cqlsyk%** ब्रूसेलोसिस दूध जनित रोग का बढ़िया व महत्वपूर्ण उदाहरण है। मनुष्य में या तो सीधे संपर्क से या संक्रमित दूध के सेवन से फैलता है। एक बार मनुष्य में प्रवेश करने के बाद ब्रूसेला ग्रैंनुलोमेटस हेपेटाइटिस करता है जो एक तीव्र ज्वर बीमारी है जो कभी भी गंभीर बीमारी बन सकती है।

2- **{k;% jksx&** यह कच्चे दूध के माध्यम से मनुष्य में प्रवेश कर सकती है। इसका कारक Mycobacterium tuberculosis है। यह पैरैन्काइमल पल्मोनरी संक्रमण करता है। उसमें खांसी, बुखार, थकान व वजन घटने जैसे लक्षण होते हैं।

3- **vk= Toj ¼VkbQkbM vkSj iSjkVkbQkbM½&** बुखार आमतौर पर खाद्य व जल जनित है पर यह दूध से होने वाले संक्रमण भी है। संक्रमण का स्त्रोत आमतौर पर मानव वाहक होता है।

4- **Q cq[kkj&** यह बुखार कॉक्सिला बार्नेट्टी के कारण होता है। कच्चा दूध उसका प्रमुख स्त्रोत है। इससे संक्रमित सभी लोगों में केवल आधे में ही बीमारी के लक्षण दिखाई देते हैं। Q- बुखार में फ्लू के समान लक्षण होते हैं। जैसे– बुखार, ठंड लगना, पसीना, सिर दर्द और कमजोरी आती है।

5- **fMIFkhfj;k&** यह बीमारी कोरेनबैक्टरियम डिप्थीरिया के विशाक्त उपभेदों के कारण होती है। यह स्वसन पथ का संक्रमण करता है जो गले में खराश, निम्न श्रेणी का बुखार आदि करता है।

nqX/k tfur jksxks ls cpko ds mik;&

1. दूध देने वाले पशुओं को स्वस्थ व साफ सुथरा रखें।
2. पशु घर साफ, कीटाणु रहित व हवादार हो।
3. दूध का बर्तन कीटाणु रहित व साफ हो।
4. साफ व कीटाणुरहित पानी का प्रबंधन पशुघर में होना चाहिए।
5. पशु का काम करने वाला किसी भी बीमारी से ग्रसित ना हो।
6. कच्चे दूध का सेवन ना करें।
7. दूध का भंडारण उचित तापमान पर करें।

गाय एवं भैंसों में अंडाशय में फॉलिक्युलर सिस्ट का बनना

सुजाता*, ऊषा यादव एवं रविदत्त

मादा एवं प्रसूति रोग विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

गाय एवं भैंसों के अंडाशय में सिस्ट बनने की समस्या आमतौर पर प्रसव के 45 दिन बाद तक देखी जाती है लेकिन यह ज्यादा दूध देने वाले पशुओं में उसके बाद भी हो सकती है। यह समस्या सामान्यत अधिक दूध उत्पाद वाले पशुओं में होती है ख़ासकर जब दूध उत्पादन अपनी चरम सीमा पर होता है। 25 –30 प्रतिशत पशुओं में यह समस्या अपने आप ही ठीक हो जाती है।

अंडाशय में सिस्ट 3 प्रकार की होती हैं–

1. कूपिक पुट्टी (फॉलिक्युलर सिस्ट)
2. ल्युटियल सिस्ट
3. सिस्टिक कार्पस ल्युटियम

i'kvk es iêh igy l gku d ?kVd bl çdkj g&

- कुछ नस्लों एवं उनकी पीढ़ियों में यह वंशानुगत देखा गया हैं। जैसे यह होल्सटीन नस्ल में अन्य डेरी नस्लों की तुलना में अधिक आम हैं।
- सिस्ट बनने की समस्या 2–5वें ब्यांत के बीच अधिक देखी गयी हैं।
- नकरात्मक ऊर्जा संतुलन (कीटोसिस) भी सिस्ट होने के प्रमुख कारणों में से एक है।
- कठिन प्रसव, तनाव, जेर का ना गिरना, दूध बुखार और ब्याने के बाद के संक्रमण को भी जोखिम कारक माना गया हैं।
- सिस्ट की समस्या सर्दी के मौसम में अधिक होती हैं।
- अत्यधिक एस्ट्रोजन हॉर्मोन का ईलाज में उपयोग या एस्ट्रोजेनिक गतिविधि वाले हरे चारे जैसे बरसीम भी सिस्ट जैसी समस्या को जन्म देती हैं।

1- **dfid flLV ¼Q,fyD;yj flLV½&** कूपिक सिस्ट अंडाषय में से अंडा ना निकलने की वजह से होती है। कूपिक सिस्ट वाली गाय/भैंस 10 दिन से ज्यादा लम्बे समय तक गर्मी (हीट) में रहती हैं। इन्हें निम्फोमानिकल (बुल्लर) कहा जाता है। इस तरह की गाय/भैंस बहुत बेचैन, घबराई हुई होती हैं और लगातार रम्भाती है। यह गाय/भैंस बहुत आक्रामक होती है और एक बैल की तरह व्यवहार करती है। लम्बे समय तक गर्मी (हीट) में रहने की वजह से पशु पूँछ को ऊपर उठा के रखता है, अगर कुछ महीनों तक ईलाज न किया जाए तो पशुओं में स्थायी प से पूँछ की षु की कुछ हड्डियों में बदलाव आ जाता है तथा कूपिक पुट्टी के उपचार के बाद भी इस तरह का हड्डियों में बदलाव ठीक नहीं हो पाता।

2- **Y;fV;y flLV&** यह सिस्ट भी अंडाशय में से अंडा ना निकलने की वजह से बनती है। इस सिस्ट में पशु हमेशा अधिक मात्रा में प्रोजेस्टेरोन हॉर्मोन को बनाता है। इस सिस्ट में पशु भारी शरीर बना लेता है और दूसरे पशुओं के ऊपर चढ़ने का प्रयास करता है परन्तु किसी अन्य पशु को अपने ऊपर नहीं चढ़ने देता। इस तरह के पशुओं में गर्दन भारी और मोटी हो जाती है। यह सिस्ट मदचक्र को रोकती है जिसके कारण पशु मद (हीट) में नहीं आते।

3- **flfLVd dkil Y;fV;e&** इस सिस्ट में अंडाशय से अंडा सामान्य तरीके से निकलता है। इस तरह की सिस्ट आम तौर पर हानिकारक नहीं होती ।अगर सिस्टिक कार्पस ल्युटियम का आकार 10 mm से कम हो तो ना तो यह अंडा निकलने की गतिविधि को प्रभावित करती है और ना ही मदचक्र की अवधि को। लेकिन अगर सिस्टिक कार्पस ल्युटियम का आकार 10 mm से ज्यादा होती है तो भ्रूण की मौत होने की संभावना ज्यादा होती है।

dfid flLV ¼Q,fyD;yj flLV½ vkj

*Corresponding author: sujatajinagal@gmail.com

Y;fVy flLV dk funku&

स गुद्दा मार्ग द्वारा गर्भाशय (बच्चेदानी) की जाँच

स अल्ट्रासोनोग्राफी

स दूध और खून में प्रोजेस्टेरोन हॉर्मोन की जाँच

dfid i|êh ¼Q,fyD;|yj flLV½ dk mipkj& इस तरह की सिस्ट को हाथ से तोड़ना सही नहीं है। चूँकि यह हालत एल.एच. हॉर्मोन की कमी से होता है इसलिए पशुचिकित्सक एल.एच. के इंजेक्शन का उपयोग करते है। नवीनतम उपचार में हम अल्ट्रासाउंड की सहायता से कूपिक पुट्टी के भरे तरल को एक ख़ास प्रकार की सुई से निकाल सकते हैं।

Y;fVy flLV dk mipkj& इस सिस्ट के उपचार में प्रोस्टाग्लैंडीन के इंजेक्शन लगाए जाते हैं।

cpko& यह समस्या साधारणतया वंशानुगत प्रवृति की होती है। इसलिए मादा पशु को उस नर पशु के साथ गर्भाधान करवाए जिसकी माँ में यह समस्या न हो। पशु के ब्याने के 3 सप्ताह के बाद गोनाडोट्रोपिन रिलीजिंग हार्मोन के टीके से कूपिक पुट्टी (फॉलिक्युलर सिस्ट) एवं ल्युटियल सिस्ट से बचा जा सकता है।

कटड़ियों एवं बच्छियों में यौवनावस्था से गर्भ जाँच तक देख–रेख

सुखबीर रावीक्ष, रविदत्त एवं संदीप कुमार

पशु मादा एवं प्रसूति रोग विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा) 125004

मादा पशुओं में यौवनावस्था से गर्भ जांच तक देख–रेख के कुछ मुख्य बिन्दु इस प्रकार से है–

1- ;kSouukoLFkk& यौवनावस्था मादा पशु की वह उम्र होती है, जिसमें मादा पशु मदचक्र प्रदर्शित करना शुरू कर देता है। मादा पशु इस उम्र मे गर्भित करवाए जाने पर गर्भधारण कर सकता है। हालांकि वयस्कता यौवनावस्था से भिन्न होती है। यद्यपि वयस्कता यौवनावस्था के बाद आती है।

2- ;kSouukoLFkk dks çHkkfor djus okys dkjd& यौवनावस्था मुख्य तौर से दो कारको पर निर्भर करती है। पहला कारक है– आयु और दूसरा शारीरिक भार। पशु मदचक्र लगभग कब प्रदर्शित करेगा यह लगभग ज्ञात होता है परन्तु उक्त आयु होने पर भी पशु द्वारा आवश्यक शारीरिक भार हासिल नहीं करने की अवस्था में वह मदचक्र प्रदर्शित नहीं कर पायेगा। इसलिए पशु की यौवनावस्था के समय आवश्यक शारीरिक भार होना जरूरी है और यह आयु से भी महत्वपूर्ण उत्तरदायी कारक माना गया है। आदर्श परिस्थितियों मे गाय 1.5–2 वर्ष और भैंस 2.5–3 साल की उम्र मे यौवनावस्था मे आ जाती है तथा इस उम्र मे पशु का भार लगभग 200 से 250 किलोग्राम होता है।

3- iks"k.k& पशुपालक को यौवनावस्था में पशु के पोषण पर विशेष ध्यान रखना चाहिए। पशुपोषण में हरा चारा, संतुलित आहार, खनिज मिश्रण मुख्य तौर से सम्मलित हैं। पशु की प्रत्येक 3 माह के अंतराल पर भिन्न–भिन्न समूह की कृमिनाशक दवा देनी चाहिए। आहार में प्रतिदिन लगभग 50 ग्राम खनिज मिश्रण देना चाहिए।

4- xHkZ èkkj.k& गाय/भैंस का मदचक्र आमतौर पर 21 दिन का होता है। अभिप्रायः यह है कि पशु प्रत्येक 21 दिन के बाद गर्मी (हीट) में होता है। गर्मी की अवधि लगभग 18 से 24 घंटे होती है। मद (हीट) के उग्र लक्षण आमतौर सुबह के समय ज्यादा होते हैं। गाय में मद (गर्मी) के लक्षण भैंस की अपेक्षा अधिक प्रबल होते हैं। मद के लक्षणों की तीव्रता पशुओं में भिन्न–भिन्न होती हैं। मदमयी पशु में अधिक बेचैनी, अधिक शारीरिक सक्रियता, आहार, जुगाली, दुग्ध उत्पादन में कमी, अन्य पशु पर चढ़ना, योनिद्वार से पारदर्शी श्लेष्मा (तार) का स्त्राव, योनिद्वार में सूजन जैसे लक्षण दिखाई देते हैं। जब दूसरे पशुओं द्वारा चढ़ने पर पशु शांत रहता है तो इसे स्टैडिंग हीट अथवा गर्मी (हीट) की अधिकता का समय कहा जाता है। पशु को इसी समय गर्भित करवाना चाहिए। अधिकतर पशुपालकों को गर्मी के सही लक्षण के जानकारी के अभाव के कारण पशु के गर्भाधान का सही समय निकल जाता है।

5- X;kfHku i'kq dh tkap& पशुओं में प्राकृतिक अथवा कृत्रिम गर्भाधान के पश्चात् गर्भ की शीघ्र जाँच करवाना आर्थिक तौर से अत्यंत महत्वपूर्ण है। जितना जल्दी ग्याभिन पशु की पहचान हो उतना ही श्रेष्ठ रहता है। ऐसा करने पर पशुपालक गर्भित पशु को अलग करके विशेष आहार देना शुरू कर सकता है। जो पशु खाली अथवा ग्याभिन नहीं मिलते, उनको अलग करके अगले मद (गर्मी) मे आने की प्रतीक्षा नियमित निरीक्षण से की जानी चाहिए। गर्भाधान का प्रारंभिक लक्षण पशु का अगले मद चक्र मे गर्मी मे नहीं आना माना जाता है।

*Corresponding author: sukhbirravishktlhry@gmail.com

गर्भाधान की जाँच की मुख्य दो विधियाँ है–

क) चिकित्सकीय विधि

ख) प्रयोगशाला परीक्षण विधि

d½ fpfdRldh; fofèk

इस विधि में गुदा मार्ग द्वारा परीक्षण से कृत्रिम गर्भाधान/नर से मिलान के 45 दिन बाद से गर्भ की जाँच की जाती है। यह सबसे प्रचलित एवं सटीक और आसानी से अपनाई जाने वाली विधि है। भ्रूण गर्भाशय की दो शाखाओं (होर्न) में से एक में विकसित होता है। अतः स्वाभाविक है कि जिस शाखा (होर्न) में भ्रूण है वह दूसरी शाखा से बढ़ा हुआ होता है। यह विधि आम प्रचलित होने के बाद भी शत–प्रतिशत परिणाम नहीं देती है। इसके लिए चिकित्सक का अनुभवी होना अति आवश्यक है। गर्भाशय में मवाद या पानी भरे होने की परिस्थिति में त्रुटि होने की सम्भावना बनी रहती है। इसलिए गर्भ जाँच के लिए नवीनतम विधियों में अल्ट्रासाउंड विधि द्वारा गर्भ जाँच का विकल्प उपलब्ध हैं। अल्ट्रासाउंड विधि द्वारा गर्भ की पहचान कृत्रिम गर्भाधान के 24–30 दिन के उपरांत संभव है।

[k½ ç;kx'kkyk ijh{k.k fofèk

इस विधि मे कृत्रिम गर्भाधान के 17–25 दिन बाद प्रोजेस्ट्रोन हार्मोन का स्तर बढ़ा हुआ होता है। परन्तु ल्युटियल सिस्ट तथा भ्रूण ममीकरण इसके अपवाद है।

यदि गर्भाधान की जाँच के बाद पशु खाली अर्थात् ग्याभिन नहीं पाया जाता है तो पशु के ग्याभिन नहीं होने के कारणों का पता लगाना चाहिए।

fu"d"k& यदि पशु यौवनावस्था के बाद सही समय पर मद मे आकर गर्भित होता है तो संतान के साथ–साथ दुग्ध उत्पादन भी निश्चित हो जाता है। यदि पशु पालक इस प्राकृतिक मद चक्र हेतु आदर्श परिस्थितियाँ उपलब्ध करा सके तो पशु से अधिकतम लाभ प्राप्त हो सकता है।

मदचक्र मे आने के बाद हीट (गर्मी) के मध्यकाल या समाप्ति की तरफ के समय पर ही पशु का कृत्रिम गर्भाधान या नर पशु से मिलान करवाना चाहिए।

कृत्रिम गर्भाधान (एआई)– सहायक प्रजनन प्रौद्योगिकी

अमित कुमार[1], ज्ञान सिंह[2] एवं संदीप कुमार[3]

[1]पशु मादा रोग एवं प्रसूति विज्ञान विभाग, भारतीय पशुचिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्ज़त नगर, उत्तर प्रदेश

[2]शैक्षणिक पशु चिकित्सालय, [3]पशु मादा रोग एवं प्रसूति विज्ञान विभाग,

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

कृत्रिम गर्भाधान (एआई) एक सहायक प्रजनन प्रौद्योगिकी (एआरटी) है जिसका उपयोग दुनिया भर में संग्रहित वीर्य को सीधे गाय या बछिया के गर्भाशय में जमा करने के लिए किया जाता है। यह प्रजनन प्रदर्शन और पशुधन की आनुवंशिक गुणवत्ता में सुधार के लिए एक बेहतरीन उपकरण है। इस तकनीक का उपयोग अक्सर डेयरी और गोमांस मवेशी उद्योगों में गहन आनुवंशिक चयन के माध्यम से वांछित विशेषताओं में तेजी से सुधार करने के लिए किया जाता है। यह जोर देना महत्वपूर्ण है कि प्रक्रिया सफल होने के लिए अनुशंसित विधि का बारीकी से पालन आवश्यक है।

,vkbl fdV vkj LoPNrk

बुनियादी गर्भाधान किट में एक स्टेनलेस स्टील एआई बंदूक, स्ट्रॉ कटर या कैंची, चिमटी, गैर–शुक्राणुनाशक स्नेहक, थर्मामीटर और थर्मस होना चाहिए। इसके अलावा, डिस्पोजेबल आपूर्ति जैसे स्प्लिट प्लास्टिक शीथ, सैनिटरी कवर, प्लास्टिक पैल्पेशन ग्लव्स और पेपर टॉवल (चित्र 1)। एआई किट को सूखी, धूल रहित, साफ जगह पर संग्रहित किया जाना चाहिए। एआई करने से पहले और बाद में किट को साफ करना महत्वपूर्ण है।

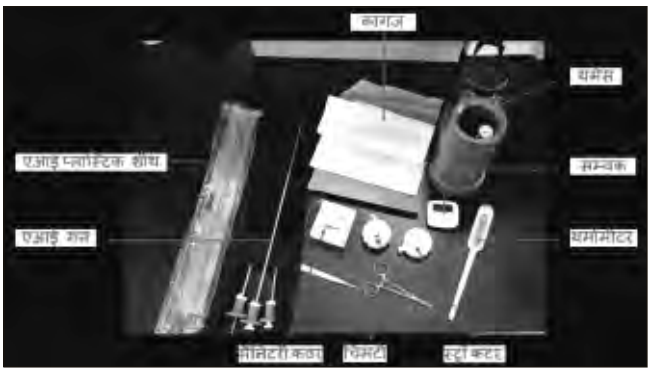

rjy ukbVªkstu VSad çcaèku

टैंक में तरल नाइट्रोजन के स्तर की आवधिक जांच यह गारंटी देने के लिए आवश्यक है कि स्ट्रॉ पूरी तरह से डूबे हुए हैं। हमेशा याद रखें कि तरल नाइट्रोजन ऑपरेटरों को ठंड से जलने की चोट का कारण बन सकता है, अगर सावधानी से नहीं संभाला जाए। टैंक को एक साफ, सूखे और अच्छी तरह हवादार जगह पर संग्रहित किया जाना चाहिए। टैंक को संक्षारक और गीली सतहों से संरक्षित किया जाना चाहिए, इसलिए इसे कार्डबोर्ड या लकड़ी के फूस का उपयोग करके जमीन से ऊंचा रखने की सिफारिश की जाती है। इसके अलावा, टैंक के अंदर संग्रहीत वीर्य की पूरी जानकारी के साथ एक इन्वेंट्री सूची को बनाए रखना बहुत महत्वपूर्ण है, जिससे टैंक में स्ट्रॉ के सीमित संचालन के साथ त्वरित स्थान की सुविधा मिलती है।

oh;Z lHkkyuk

तरल नाइट्रोजन टैंक से स्ट्रॉ को निकालने के बाद वीर्य को ठीक से संभालना महत्वपूर्ण है। वस्तुतः हम हिमीकृत तापमान के संपर्क में आने से बचने के लिए कनस्तर, बेंत और अप्रयुक्त स्ट्रॉ को यथासंभव 5–8 सेकंड तक टैंक की गर्दन के करीब रखना चाहते हैं, जो थर्मल क्षति (चित्र 2 ए) को बढ़ावा देता है। हिमीकृत वीर्य की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए टैंक के बाह्य वातावरण के साथ कम से कम समय के लिए संपर्क करना चाहिए। अतः भंडारण टैंक की गर्दन के निचले हिस्से में ही स्ट्रॉ को निकालना चाहिए, जहां तापमान पर्याप्त रूप से ठंडा है। यही कारण है कि वीर्य को थर्मल नुकसान को रोकने के लिए और ऑपरेटर को संभावित चोट बचाने के लिए भी अपनी उंगलियों के बजाय चिमटी के साथ स्ट्रॉ को निकालना आवश्यक है (चित्र 2 बी)।

foxyu çfØ;k

एक और मुख्य मुद्दा सही वीर्य विगलन प्रक्रिया है;

*Corresponding author:

fp= 2- mfpr oh;l gMfyax rduhdA
A भंडारण टैंक की गर्दन के पास स्ट्रॉ हटाने। B ऑपरेटर सुरक्षा के लिए चिमटी और दस्ताने का उपयोग।

विगलन की प्रक्रिया तेजी से और सही तापमान पर होती है। द नेशनल एसोसिएशन ऑफ़ एनिमल ब्रीडर्स के अनुसार न्यूनतम 30 सेकंड के लिए 30–35 ℃ का उपयोग करना उचित है। हमेशा सटीक तापमान निगरानी (चित्रा 3 ए) के लिए थर्मामीटर के साथ एक पानी के चौड़े मुंह वाले थर्मस का उपयोग करें। थर्मस से स्ट्रॉ को हटाने से पहले 30–60 सेकंड की गणना करने के लिए टाइमर का उपयोग करना भी एक अच्छा विचार है। वीर्य विगलन के पश्चात् वीर्य को 15 मिनट के भीतर गर्भाशय में जमा किया जाना चाहिए। कम गर्भाधान दर थर्मस में लंबे समय तक रखे गए वीर्य स्ट्रॉ या गर्भाशय में जमा होने की प्रतीक्षा में पर्यावरण के लिए विस्तारित जोखिम से हो सकती है। इसलिए, जब तक आप अनुभवी एआई–तकनीशियन का उपयोग नहीं कर रहे हैं, जो इस 15 मिनट की अवधि के भीतर कई गायों का प्रजनन कर सकते हैं, तो यह एक समय में केवल एक या दो स्ट्रॉ के विगलन की सिफारिश की जाती है।

foxyu dk ckn] oh;l LVª, dk&

1. सारे पानी को निकालने के लिए एक कागज के साथ सुखाएं (अत्यधिक शुक्राणुनाशक एजेंट; चित्रा 3 बी)।
2. प्रत्यक्ष सूर्य के प्रकाश या यूवी प्रकाश (शुक्राणु कोशिका क्षति) के संपर्क में आने से बचाएँ।
3. चरम तापमान परिवर्तनों से बचाएँ, जो थर्मल शॉक (गतिशीलता में कमी) का कारण बनती है।
4. तापीय आघात से बचने के लिए स्ट्रॉ डालने से पहले एआई बंदूक को एक साफ कागज तौलिया के साथ पोंछ के शरीर के पास रखकर गर्म किया जाना चाहिए।

इसके अलावा, एआई गन लोड करते समय, यह आवश्यक है–

1 सुनिश्चित करें कि स्ट्रॉ के सम्मिलन की अनुमति देने के लिए एआई बंदूक प्लग को पीछे हटा दिया गया है।
2. कॉटन प्लग एंड वाले स्ट्रॉ को पहले डालें।
3. सेनेटरी शीथ के साथ एक अच्छा फिट होने के लिए, एक साफ–धारदार स्ट्रॉ कटर या कैंची के साथ सीधा –सीधा (कोण पर नहीं) काटें।
4. स्लाइड और विभाजित प्लास्टिक म्यान को संलग्न करें और इसे एआई बंदूक के साथ मजबूती से बंद करें।
5. एआई म्यान और जानवरों की योनि के बीच संपर्क को रोकने के लिए सैनिटरी म्यान के साथ म्यान को सुरक्षित रखें, ताकि गर्भाशय बैक्टीरिया के प्रदूषण को कम किया जा सके।
6. भरी हुई एआई गन को गर्म रखें और गंदे सतहों से अलग किया जाए जब तक कि इसका उपयोग न किया जाए।

mfpr xHkkZèkku rduhd

मवेशियों में, एक रेक्टो–योनि तकनीक का उपयोग करके एआई किया जाता है। यह आवश्यक है कि ऑपरेटर को इस तकनीक में पहले से प्रशिक्षित किया जाता है, हालांकि यह मुश्किल नहीं है, अच्छे परिणामों की गारंटी के लिए कौशल और प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। उचित वीर्य गन हैंडलिंग और गर्भाशय के अंदर सही स्थान पर वीर्य को जमा करने की क्षमता महत्वपूर्ण है–

xeÊ dk irk yxkuk

किसानों को गायों के कुशल प्रजनन प्रबंधन के लिए उचित प्रजनन रिकॉर्ड रखने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए । आवश्यक जानकारी में गाय की पहचान, प्रेक्षित गर्मी की तिथियां, संभोग की तिथियाँ गर्भाधान, गर्भावस्था/ गैर–गर्भावस्था परीक्षण (जैसे प्रोजेस्टेरोन परख और/या मैनुअल गर्भावस्था निदान), तिथि और परिणाम, और दूध

उत्पादन की तारीख शामिल हैं। झुंड पालन की परिस्थिति में किसानों को गर्मी के संकेत के लिए एक दिन में कम से कम तीन बार (प्रत्येक समय 20 मिनट का दृश्य अवलोकन– सुबह, दोपहर और देर रात) गायों पर नजर रखनी चाहिए। निम्नलिखित संकेत पशु में गर्मी को दर्शाते हैं :

xeÊ dk fofHkUu pj.kksa dk ladsr&

1- **xeÊ ls iwoZ dk ladsr&** बेचैनी, झुंड से अलग, कान की हलचल, दूसरे पशुओं पे चढ़ने का प्रयास, दूध उत्पादन कम हो जाना, चिंघाड़ना।

2- **LFkk;h xeÊ&** दूसरे पशु के चढ़ने पर पशु वहीं खड़ा रहता है; अन्य संकेतों में स्पष्ट और प्रचुर मात्रा में पानी के जैसे तार भैंसों में डोके लगाना लगाना शामिल है।

भैंस में ऊष्मा के संकेत गाय के समान स्पष्ट नहीं होते हैं। इसके अलावा ऊपर, वल्वा के किनारे पर सिलवटों के कारण सूजन हो सकती है जिसे गर्मी के संकेतक के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। भैंस में गर्मी की अवधि 6 घंटे से अधिक नहीं रहती है और पशु रात में ज्यादातर गर्मी में होता है। आदर्श रूप से, यदि किसी गाय को पहली बार सुबह गर्मी में देखा जाता है, तो उसे उसी दिन की दोपहर गर्भाधान में जाना चाहिए और अगर वह पहली बार दोपहर या शाम को गर्मी में दिखाई देती है, तो अगली सुबह उसका गर्भाधान करना चाहिए।

सैद्धांतिक रूप से, गर्भाधान का सबसे अच्छा समय गर्मी शुरू होने के बाद 6–18 से के बीच है, यानी ओव्यूलेशन से पहले। मवेशी और भैंस में गर्मी खत्म होने के बाद (10–12 घंटा) ओव्यूलेशन होता है। टेल पेंट, हीट माउंट डिटेक्टर और टीज़र जैसे हीट डिटेक्शन के लिए एड्स तुल्यकालन का उपयोग कुछ आर्थिक रूप से वारंट स्थितियों के तहत किया जा सकता है। गर्भाधान के दिन एकत्र किए गए दूध के नमूनों में आरआईए द्वारा प्रोजेस्टेरोन का मापन गर्मी का पता लगाने की सटीकता पर मूल्यवान पूर्वव्यापी जानकारी प्रदान करता है।

xHkkZèkku dk le; 'kjhj dh fLFkfr

गर्भाधान के नुकसान को कम करने के लिए किसानों को गायों का शारीरिक स्कोर 2.5 और 3.5 के बीच में रखने का लक्ष्य रखना चाहिए (1–5 के पैमाने पर आधारित)। जो गायें बहुत मोटी होती हैं उनमें प्रारंभिक भ्रूण मृत्यु का खतरा अधिक होता है। पतली गायों में, खासकर यदि वे स्थिति खो रहे हैं, तो अमदकाल और गर्भाधान दर खराब होने गर्भाधान में देरी होती है।

'kq: djus ls igys&

1. यह जांचना आवश्यक है कि एआई प्रक्रिया शुरू करने के लिए सभी आवश्यकताएँ पूर्ण हैं।
2. ऑपरेटर को साफ सुरक्षात्मक कपड़े पहनने चाहिए और नाखून ज्यादा नहीं बढ़े हुए होने चाहिए।
3. रोगजनकों के साथ प्रजनन पथ के संदूषण से बचने के लिए पशु के आस–पास के क्षेत्र की स्वच्छता पर पूरा ध्यान दें।
4. जिस गाय का गर्भाधान किया जाना है, उसे ठीक से रोका जाना चाहिए। एक क्रश की सिफारिश की जाती है। जहां एक क्रश उपलब्ध नहीं है, गाय को टेदर किया जाना चाहिए और शरीर आंदोलनों को प्रतिबंधित किया जाना चाहिए।
5. सबसे पहले, तनाव को कम करने के लिए गर्भाधान से पहले पशु को सावधानीपूर्वक और धीरे से प्रतिबंधित करना आवश्यक है। फिर, वल्वा क्षेत्र को साफ किया जाना चाहिए। मल को हटाने के लिए एक कागज का उपयोग करें। जिससे संदूषण और गर्भाशय में एक संभावित संक्रमण को रोका जा सके। उत्साह और तनाव से बचा जाना चाहिए शुक्राणु परिवहन को परेशान करता है।
6. धीरे–धीरे गुदा में प्रवेश करने के लिए पर्याप्त गैर–शुक्राणुनाशक स्नेहक के साथ प्रति पशु एक डिस्पोजेबल प्लास्टिक का उपयोग करें। एक बार जब आपकी बांह अंदर हो जाती है, तो बांह के साथ मलाशय पर दबाव डालते हुए वल्वा होठों को खोलें, जिससे गर्भाधान बंदूक अंदर जा सके। योनि तल पर स्थित मूत्राशय के मूत्रमार्ग में प्रवेश से बचने के लिए, एआई गन को योनी में 30–40^{o} कोण पर डाला जाना चाहिए।
7. रेक्टो–योनि एआई विधि को करने के लिए, गर्भाशय ग्रीवा को गर्भाशय के उद्घाटन तक पहुंचने तक

गर्भाशय के माध्यम से गर्भाशय में निर्देशित करने के लिए मलाशय के माध्यम से पकड़ना आवश्यक है। इसके बाद, योनि के अग्र भाग को चकमा देना और गर्भाशय ग्रीवा को गर्भाशय की दीवार में निर्देशित करना चाहिए, जो कि मलाशय की दीवार के माध्यम से हेरफेर करता है। एक बार पहुंचने के बाद, गर्भाशय ग्रीवा में प्रवेश करने के लिए सैनिटरी कवर को चीरना होगा, एक विशिष्ट किरकिरा सनसनी होगी, और गर्भाशय ग्रीवा के छल्ले को पारित करना होगा। पूरे वीर्य की खुराक गर्भाशय ग्रीवा के आंतरिक उद्घाटन के ठीक सामने गर्भाशय के शरीर में जमा होती है।

8. एआई गन की वापसी के बाद शुक्राणु परिवहन की सहायता के लिए वल्वा की मालिश की जा सकती है।

oh;l dk LFkku

गर्भाशय में वीर्य की उचित नियुक्ति गर्भावस्था के प्रति गर्भाधान दर में सुधार करती है। पूरे वीर्य की खुराक गर्भाशय ग्रीवा के आंतरिक उद्घाटन के ठीक सामने गर्भाशय के शरीर में जमा होती है। इसके अलावा, यह आवश्यक है कि गर्भाशय के होरन में बहुत गहरा न जाए, क्योंकि ओव्यूलेशन के लिए गलत गर्भाशय के होरन में वीर्य जमा करने का उच्च जोखिम है।

fdlku dk vuqorÊ lykg

किसानों को निम्नलिखित पहलुओं पर सलाह दी जानी चाहिए–

1. प्रत्येक जानवर की प्रजनन घटनाओं का रिकॉर्ड रखे।
2. एआई के बाद 16वें से 24वें दिन तक प्रतिदिन गर्मी के लिए अवलोकन (प्रति दिन कम से कम 2 बार,) सुबह और शाम, 15–30 मिनट के लिए)।
3. गैर–गर्भधारण के लिए एआई के बाद 21–23 दिन तक जानवरों को गर्मी में नहीं देखा जाता है दूध या प्लाज्मा में प्रोजेस्टेरोन का अनुमान।
4. एआई के बाद जानवरों पर मैनुअल गर्भावस्था निदान का अनुरोध करना जो गर्मी में 55–60 दिन तक नहीं देखा गया है।
5. योनि स्राव में किसी भी असामान्यता के लिए अवलोकन।
6. गर्भावस्था के दौरान उचित खिला शासन।
7. उम्मीद के हिसाब से 2 महीने पहले गर्भवती जानवरों को सुखा देना।
8. ऐसा कोई भी जानवर होना जिसमें असामान्य डिस्चार्ज हो, या जो भीतर गर्मी न दिखाता हो 60 दिनों के बाद, एक पशु चिकित्सक द्वारा जांच की जाती है।

—f=e xHkkèkku d mi;kx l dbl lHkkfor ykHk&

कृत्रिम गर्भाधान का उपयोग आमतौर पर जानवरों की कई प्रजातियों में प्राकृतिक संभोग के बजाय किया जाता है क्योंकि इससे कई लाभ मिल सकते हैं। इन लाभों में बेहतर गुणवत्ता वाले सायरों के उपयोग की सुविधा (व्यय और स्वामित्व के जोखिम के बिना), बीमारियों के संचरण को कम करना, जानवरों और किसानों की बढ़ी हुई सुरक्षा, उत्पादन क्षमता में वृद्धि और बेहतर आनुवांशिकी शामिल हैं। प्राकृतिक संभोग एक तनावपूर्ण प्रक्रिया है जिसमें जानवरों और किसानों दोनों को दुर्घटनाओं के परिणामस्वरूप चोटों की बहुत अधिक प्रवृत्ति होती है। विशेष रूप से मवेशियों में, नर बहुत बड़े होते हैं और कभी–कभी आक्रामक होते हैं। कृत्रिम गर्भाधान एक नरपशु को आधार पर रखने से जुड़े सभी जोखिमों को दूर करता है। इसके अलावा, कृत्रिम गर्भाधान से बीमारियों के संक्रमण का खतरा कम हो जाता है। संपूर्ण कृत्रिम गर्भाधान प्रक्रिया प्राकृतिक संभोग की तुलना में बहुत अधिक स्वच्छ है। कृत्रिम गर्भाधान से कार्यक्षमता भी बढ़ती है। अधिकांश नरपशु आमतौर पर एक ही स्खलन में पर्याप्त शुक्राणु पैदा करते हैं जो की सौ से अधिक खुराक बनाने के लिए पर्याप्त होता है। कुछ प्रजातियों के लिए, वीर्य फिर स्ट्रॉ में पैक किया जाता है। जमे हुए वीर्य के ये स्ट्रॉ आमतौर पर नाइट्रोजन टैंक में संग्रहीत होते हैं, जहां वे वर्षों तक रहेंगे और उन्हें आवश्यकतानुसार उपयोग किया जा सकता है।

1- **cly d mi;kx dh n{krk e of)&** प्राकृतिक प्रजनन के दौरान, एक नर पशु गर्भावस्था का उत्पादन करने के लिए सैद्धांतिक रूप से बहुत अधिक वीर्य जमा करता है। इसके अलावा, प्राकृतिक प्रजनन शारीरिक रूप से तनावपूर्ण है। ये दोनों कारक प्राकृतिक संभोग की संख्या को सीमित कर सकते हैं जो एक नर पशु कर सकता है। हालांकि, एकत्रित वीर्य को एक स्खलन

से सैकड़ों खुराक बनाने के लिए पतला और बढ़ाया जा सकता है। इसके अलावा, वीर्य को आसानी से ले जाया जा सकता है, जिससे विभिन्न भौगोलिक स्थानों में कई मादाओं को एक साथ गर्भाधान की अनुमति मिलती है, और वीर्य को लंबे समय तक संग्रहीत किया जा सकता है, जिसका अर्थ है कि नर पशु अपने प्राकृतिक प्रजनन जीवन समाप्त होने के बाद लंबे समय तक संतान पैदा कर सकते हैं।

2- **vkuqoaf'kd p;u dh {kerk esa o`f)&** क्योंकि कृत्रिम गर्भाधान से पुरुषों को अधिक संतान पैदा करने की अनुमति मिलती है, कम नर पशु की जरूरत होती है। इसलिए, एक माता–पिता के रूप में उपयोग के लिए केवल कुछ सर्वश्रेष्ठ नर पशु का चयन कर सकते हैं। इसके अलावा, क्योंकि नर पशु से अधिक संतान हो सकती है, उनकी संतानों को नर के आनुवंशिक मूल्य का अधिक सटीक रूप से मूल्यांकन करने के लिए एक संतान परीक्षण कार्यक्रम में इस्तेमाल किया जा सकता है। अंत में, व्यक्तिगत किसान आनुवांशिक पूल को बढ़ाने के लिए कृत्रिम गर्भाधान का उपयोग कर सकते हैं जिसके साथ उनके या उनके पशुओं को सम्भवतया, आंतरिक प्रजनन के संभावित घटते प्रभाव को देखा जा सकता है।

3- **?kVkbZ xbZ ykxr&** नर जानवर अक्सर नर पशु की तुलना में बड़े होते हैं और अपेक्षाकृत बड़ी मात्रा में फ़ीड का उपभोग कर सकते हैं। इसके अलावा, पुरुष जानवर अक्सर अधिक मजबूत, शक्तिशाली और संभावित रूप से बीमार–मानवकृत होते हैं और इस तरह उन्हें विशेष आवास और हैंडलिंग उपकरण की आवश्यकता होती है।

4- **tkuojksa vkSj fdlkuksa ds fy, c<+h gqbZ lqj{kk&** जैसा कि उल्लेख किया गया है, नर जानवर बड़े और आक्रामक बन सकते हैं। इन कारकों का मतलब है कि एक खेत पर एक बैल को बनाए रखना खतरनाक हो सकता है। इसके अलावा, मादाओं की तुलना में वयस्क नर पशु के अपेक्षाकृत बड़े आकार की वजह से, प्राकृतिक संभोग से कृत्रिम गर्भाधान की तुलना में गाय या बैल में दुर्घटनाओं और चोट लगने की अधिक संभावना होती है।

5- **jksx lapj.k esa deh&** प्राकृतिक मवेशियों के बीच यौन रोगों के हस्तांतरण की अनुमति देता है। कुछ रोगजनकों को कृत्रिम गर्भाधान के माध्यम से वीर्य में प्रेषित किया जा सकता है, लेकिन संग्रह प्रक्रिया रोग एजेंटों की जांच के लिए अनुमति देती है। एकत्रित वीर्य को गुणवत्ता के लिए नियमित रूप से जांचा जाता है, जो नर पशु बांझपन से जुड़ी समस्याओं से बचने में मदद कर सकता है।

हालांकि, कृत्रिम गर्भाधान में कुछ संभावित कमियां हैं, जिन पर विचार किया जाना चाहिए। सबसे पहले, यह अधिक प्रयोगशाला हो सकती है। नर जानवर सहज रूप से उन मवेशियों का पता लगाते हैं जो गर्भाधान के लिए सही स्थिति में हैं। कृत्रिम गर्भाधान से किसान की जिम्मेदारी का पता चलता है। खराब पहचान से प्रजनन क्षमता में कमी आती है। इसके अलावा, प्रति पुरुष संतानों की संख्या बढ़ने से केवल चयनात्मक फायदे होते हैं अगर सबसे अच्छे पुरुषों को सही तरीके से निर्धारित किया जा सके। अन्यथा यह प्रक्रिया केवल जनसंख्या में आनुवंशिक परिवर्तनशीलता को कम करती है। प्रति पुरुष संतानों की संख्या में वृद्धि हमेशा जीन पूल को कम करती है। अधिक गहन चयन के लाभों को कम भिन्नता के नकारात्मक प्रभावों के खिलाफ संतुलित होना चाहिए। अन्त में, कृत्रिम गर्भाधान आपके झुंड के आनुवंशिकी में काफी सुधार कर सकता है।

बकरी पालन की महत्वता

ज्योति शुन्थवाल, देवेन्द्र सिंह, राहुल यादव*
हरियाणा पशु विज्ञान केंद्र, महेंद्रगढ़
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

बकरी छोटे जुगाली करने वाले पशुओं में आती है। बकरियों को दूध व मांस उत्पादन के लिए पाला जाता है। इसके अतिरिक्त बकरियों से रेशा व चमड़ा उत्पादन भी किया जाता है। बकरी पालन खासतौर पर गरीब भूमिहीन पशुपालकों के लिए एक अत्यंत फायदेमंद व्यवसाय है। इसे गरीब पशुपालक की गाय भी कहा जाता है। पूरे विश्व में करीब 300 के करीब बकरी की नसलें पायी जाती है। भारत में बकरी की करीब 20 नसलें पायी जाती हैं। बकरी पालन एक लाभकारी व्यवसाय है, इस भूमिहीन पशुपालक व महिलाओं व बच्चों की मदद से आसानी से पाला जा सकता है।

वर्तमान परिस्थिति में जहां गाय–भैंस पालन एक महंगा व्यवसाय है। बकरी पालन बहुत कम लागत के शुरू किया जा सकता है। बकरी किसी कठोर वातावरण में आसानी से ढाल जाती है। आज ग्लोबल वार्मिंग के समय में पूरे विश्व का तापमान बढ़ रहा है, ऐसी स्थिति में बकरी पलान भविष्य में एक अच्छा एवं लाभकारी व्यवसाय साबित हो सकता है। अतः देहस के विभिन्न प्रदेशों में अनेकों आधुनिक बकरी फार्म सफलतापूर्वक चल रहे हैं। भारतवर्ष में बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए जहां खेती योग्य भूमि की अत्यधिक कमी है वह छोटे अकार के पशु जैसे बकरी पालन का महत्त्व और भी बढ़ जाता हैं।

भारत जैसे विकासशील देशों में बकरी पालन बहुत ही लाभकारी व्यवसाय का एक अलग ही सामजिक एवं आर्थिक महत्त्व है। बकरी पालन की रुचि प्रदेश में निरंतर बढ़ रही है। बकरी पालन के सफलता के लिए महत्वपूर्ण कारण निम्नलिखित हैं–

प्राकृतिक रूप से निम्न कारक बकरी विकास दर को बढ़ाने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं–

- बकरी पालन समाज के भूमिहीन बेरोजगारों के लिए एक अच्छा स्वरोजगार साबित हो सकता हैं।
- बकरी का विभिन्न जलवायु क्षेत्रों में अपने को ढालने की क्षमता रखना। इसी गुण के कारण बकरियां देश के विभिन्न भौगोलिक भू–भागों में पाई जाती हैं।
- बकरियां आमतौर पर साल में दो बार बचे पैदा करने की क्षमता रखती है।
- एक समय में एक से अधिक बच्चे को जन्म दे सकती है।
- बकरी मांस उत्पादन क्षमता काफी उत्तम होती हैं।
- बकरी मांस उत्पादन में किसी भी प्रकार की धार्मिक प्रतिबंध नहीं हैं।
- बकरी पालन कम भूमि क्षेत्र में किया जा सकता हैं।
- बकरीपालन में अलग से हरे चारे का प्रबंध करने की आवश्यकता नहीं होती हैं।
- बकरी पालन में आमतौर पर खानपान पर कोई खर्च नहीं आता हैं, ये सड़क किनारे पायी जाने वाली वनस्पतियों, पेड़–पौधों पर निर्भर रह सकती है।
- बकरियों पर अत्यधिक गर्मी का कोई ख़ास प्रभाव नहीं होता, अतः ये कम पानी वाले क्षेत्रों में आसानी से पाली जा सकती हैं।
- मांस उत्पादन में बकरी पालन काफी फायदेमंद साबित होता है, 6–8 महीने पर बकरी को मांस के लिए बेचा जा सकता है।
- बकरी को चलता–फिरता फ्रिज भी कहा जाता है, क्योंकि इनसे दिन क किसी भी समय दूध निकाला जा सकता हैं।
- बकरी के दूध की एक अलग से ख़ास महत्वता होती है। इसके दूध की कीमत डेंगू जैसी बिमारी काल में अत्यधिक बढ़ जाती है।
- बकरी पालक ईद त्यौहार के मौके पर काफी अच्छी कीमत में बकरों की बिक्री होती हैं।
- बकरी व्यवसाय को कम लागत के साथ शुरू किया जा सकता हैं। साथ ही इससे अधिक आमदनी प्राप्त की जा सकती हैं।
- भारत की विभिन्न जलवायु की उन्नत नस्लें जैसेः ब्लैक बंगला, बारबरी, जमनापारी, सिरोही, मारबारी, मालावारी, गंजम आदि हैं।
- बकरी के दूध में विशिष्ट रसायनी विशेषता और गुणवत्ता है जिससे इसकी भविष्य में सफलता की संभावना और भी बढ़ जाती हैं।
- बकरी के दूध से विभिन्न प्रकार के उत्पाद जैसे पनीर, छेना, आइसक्रीम, रस्सगुल्ला आदि बनाये जा सकते है।
- बकरी के दूध से किसी भी प्रकार की एलर्जी नहीं होती, साथ ही इसके दूध की बहुत ही स्वास्थ्य सम्बन्धी विशेषताएं हैं। अतः इसके दूध की अच्छी कीमत प्राप्त की जा सकती है।

बकरी पालन बहुत ही सरलता के साथ किया जा सकता हैं, साथ ही इससे मिलने वाले उत्पाद की अलग ही विशेषताएं होती हैं। इन्हीं विशेषताओं को देखते हुए भविष्य में भारत जैसे विकासशील देश में बकरी पालन की सम्भावनायें बहुत बढ़ जाती हैं।

*Corresponding author: rahuldrrahul16889@luvas.edu.in

कुक्कुट प्रजातियों में कृत्रिम गर्भाधान

पूनम रतवान[1]*, डी.एस. दलाल[1], मनोज कुमार[2], ए.एस. यादव[1]
[1]पशु आनुवंशिकी एवं प्रजनन विभाग, [2]पशुधन फार्म परिसर विभाग
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

कृत्रिम गर्भाधान (एआई) पशुधन उद्योग में सबसे व्यापक रूप से इस्तेमाल की जाने वाली प्रजनन तकनीक है। कृत्रिम गर्भाधान कुक्कुट प्रजातियों, विशेष रूप से ब्रॉयलर ब्रीडर और टर्की, के प्रजनन प्रदर्शन में सुधार करने के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण है क्योंकि शरीर के भारी वजन के कारण इनकी प्रजनन क्षमता कम है। कुक्कुट उत्पादन में कृत्रिम गर्भाधान प्रौद्योगिकी के उपयोग ने कम संख्या में श्रेष्ठ नरों से अधिक संख्या में मादाओं तक आनुवंशिक सामग्री के तेजी से प्रसार को सक्षम किया है। मुर्गियों में कृत्रिम गर्भाधान के लिए मुर्गी की बुनियादी शारीरिक रचना एवं शरीर विज्ञान और मुर्गे के प्रजनन पथ को समझने की आवश्यकता होती है। इस तकनीक के सफल प्रयोग के लिए अच्छी गुणवत्ता वाले वीर्य की आवश्यकता होती है जिसे इष्टतम प्रजनन क्षमता प्राप्त करने के लिए मादा में शुक्राणु भंडारण नलिकाओं के बहुत करीब से गर्भाधान किया जाना चाहिए।

d|Dd|V oh;| d| y{k.k

मुर्गे के वीर्य का प्राकृतिक रंग सफेद या मोती जैसा सफेद होता है। भारी नस्ल के नर 0.75 से 1 मिलीलीटर वीर्य पैदा कर सकते हैं और हल्की नस्ल के नर 0.4 से 0.6 मिलीलीटर वीर्य पैदा कर सकते हैं। एक मुर्गे से एकत्र किया गया वीर्य, मात्रा और शुक्राणु की मात्रा के आधार पर 5 से 10 मुर्गियों के गर्भाधान के लिए पर्याप्त होता है। शरीर के आकार और प्रकाश कार्यक्रम के आधार पर नर 12 सप्ताह की उम्र में ही वीर्य का उत्पादन कर सकते हैं, हालांकि, ऐसे मुर्गे के शुक्राणु शायद ही कभी व्यवहार्य और प्रभावी होते हैं। जब तक कि नर न्यूनतम 18 सप्ताह की आयु के आसपास न हो जाएं तब तक परिपक्वता विकसित नहीं होती। वीर्य संग्रह के लिए 22 या 24 सप्ताह की उम्र के नर का उपयोग किया जाता है। एआई के लिए आवश्यक शुक्राणुओं की खुराक भंडारण समय या उम्र के साथ बढ़ती है। वीर्य का गुणवत्ता मूल्यांकन पुरुष प्रजनन क्षमता का संकेत देता है और प्रजनन क्षमता और बाद में अंडों की हैचबिलिटी का प्रमुख निर्धारक है।

वीर्य में शुक्राणु और वीर्य प्लाज्मा होते हैं। मुर्गी का वीर्य (3 से 8 अरब शुक्राणु प्रति मिलीलीटर) आमतौर पर अत्यधिक घना होता है। वीर्य की गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले कई कारकों में, शुक्राणु की गतिशीलता घरेलू मुर्गियों में प्रजनन क्षमता का एक प्राथमिक निर्धारक है; हालांकि, सफल एआई के लिए वीर्य की दृश्य परीक्षा को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। एकत्रित वीर्य को कुक्कुट प्रजातियों के लिए 2–8 डिग्री सेल्सियस पर संरक्षित किया जाना चाहिए। आदर्श रूप से अच्छी प्रजनन क्षमता के लिए टर्की के शुक्राणु को 4–8 डिग्री सेल्सियस और मुर्गे के वीर्य को 7–8 डिग्री सेल्सियस पर संरक्षित किया जाना चाहिए। एक दिन के अंतराल के साथ वीर्य संग्रह के लिए एक नर को सप्ताह में तीन बार इस्तेमाल किया जा सकता है, हालांकि, हर दिन वीर्य संग्रह से निषेचन क्षमता में बदलाव नहीं होगा लेकिन वीर्य की मात्रा कम होगी।

,vkbZ e| pj.k

कुक्कुट प्रजातियों में एआई वीर्य संग्रह, वीर्य कमजोर पड़ने और गर्भाधान से जुड़ी एक तीन–चरणीय प्रक्रिया है। दूसरे चरण को छोड़ा जा सकता है यदि संग्रह के बाद 30 मिनट के भीतर गर्भाधान के लिए 'स्वच्छ' वीर्य का उपयोग किया जाना है।

1- oh;| lxzg

एआई कार्यक्रम में पहला कदम वीर्य का मैनुअल संग्रह है। वीर्य संग्रह के लिए, आमतौर पर दो सदस्यों की एक टीम शामिल होती है, एक मुर्गे को पकड़ने के लिए और दूसरा वीर्य एकत्र करने के लिए। मुर्गे को एक क्षैतिज स्थिति में एक व्यक्ति द्वारा उस ऊंचाई पर रखा जाता है जो

*Corresponding author: punam.ratwan@gmail.com

ऑपरेटर के लिए सुविधाजनक है जो वीर्य एकत्र करने का प्रयास कर रहा है। वीर्य एकत्र करने के लिए ऑपरेटर को बाएं हाथ के अंगूठे और तर्जनी को क्लोअका के दोनों ओर रखना चाहिए और धीरे से मालिश करनी चाहिए। अपने दाहिने हाथ से ऑपरेटर को एक संग्रह कीप पकड़नी चाहिए और अंगूठे और तर्जनी से श्रोणि की हड्डियों के नीचे पेट के नरम हिस्से की मालिश करनी चाहिए। मालिश तेज और निरंतर होनी चाहिए जब तक कि मुर्गा क्लोअका से पैपिला को बाहर न निकाल दे। एक बार जब पैपिला पूरी तरह से बाहर निकल जाता है, तो बाएं हाथ के अंगूठे और तर्जनी का उपयोग वीर्य को एकत्रित फ़नल में निचोड़ने के लिए किया जाता है। वीर्य को मल और पंख से दूषित होने से बचाएं। रक्त, पेशाब, मल या अन्य मलबे से दूषित पीले वीर्य और वीर्य से बचना चाहिए। वीर्य को पानी के संपर्क में न आने दें। पतला वीर्य को ठंडा होने के लिए किसी कूलर या फ्रिज (3 से 12 ºC) में रखें।

2- xHkkèkku

गर्भाधान के लिए उपयोग किए जाने वाले सभी उपकरणों को उपयोग से पहले अच्छी तरह से साफ और सूखा होना चाहिए। गर्भाधान तब किया जाना चाहिए जब अधिकांश पक्षियों ने अंडे देना पूरा कर लिया हो क्योंकि डिंबवाहिनी के निचले सिरे में एक कठोर खोल वाला अंडा गर्भाधान में बाधा डालता है और प्रजनन क्षमता को कम करता है। दोपहर 3 बजे के बाद मुर्गी का गर्भाधान करने से बेहतर परिणाम प्राप्त हुए हैं। टर्की के झुंडों में शाम 5 बजे के बाद गर्भाधान करने पर बेहतर परिणाम प्राप्त होते हैं। गैर– बिछाने वाली मुर्गियों का गर्भाधान करना मुश्किल है। आमतौर पर गर्भाधान तब किया जाता है जब मुर्गियों का झुंड 25% अंडा उत्पादन तक पहुंच जाता है। पहले सप्ताह के दौरान दो बार फिर साप्ताहिक अंतराल पर मुर्गियों का गर्भाधान किया जाता है।

xHkkèkku dh [kjkd vkSj vko`fÙk

मुर्गी– 0.05 मिली, सप्ताह में एक बार; टर्की– 0.025 मिली हर 2 हफ्ते में एक बार; बत्तख– 0.03 मिली हर 5 दिन में एक बार; हंस– हर 7 दिनों में 0.05 मिली।

यह देखा गया है कि नर सुबह के समय अच्छी गुणवत्ता के अधिक वीर्य का उत्पादन करते हैं और मादा रात 9 बजे के आसपास गर्भाधान के समय अधिक उपजाऊ अंडे देती हैं। 1 घंटे से अधिक संग्रहित करने पर मुर्गे के वीर्य की निशेचन क्षमता कम होने लगती है। चिकन वीर्य के तरल ठंडे (4 डिग्री सेल्सियस) भंडारण का उपयोग वीर्य के परिवहन और शुक्राणुजोज़ा की व्यवहार्यता को 6–12 घंटे तक बनाए रखने के लिए किया जा सकता है। सप्ताह में 4–6 बार वीर्य एकत्र किया जाता है, हालांकि हर दिन वीर्य संग्रह से निषेचन क्षमता में बदलाव नहीं होगा लेकिन वीर्य की मात्रा कम होगी। मुर्गे के वीर्य का जीवन बहुत सीमित होता है, इसलिए वीर्य संग्रह के एक घंटे के भीतर मुर्गियों का गर्भाधान पूरा हो जाना चाहिए। गर्भाधान करने के लिए दोपहर 2.00 से 4.00 बजे के बीच सबसे अच्छा समय है। इसका कारण यह है कि सुबह के समय, अधिकांश मुर्गियों के डिंबवाहिनी में एक अंडा होता है, जिससे अंडाशय में वीर्य के मुक्त मार्ग में बाधा उत्पन्न होती है।

—f=e xHkkèkku d; ykHk

1) आम तौर पर एक मुर्गे को छह से दस मुर्गियों के साथ जोड़ा जा सकता है। कृत्रिम गर्भाधान से इस संभोग अनुपात को चार गुना बढ़ाया जा सकता है। इस तरह रुचि के एक विशेष गुण के लिए उच्च आनुवंशिक योग्यता वाले एक मुर्गे का उपयोग अधिक मुर्गियों में किया जा सकता है।
2) उत्कृष्ट प्रदर्शन वाले वृद्ध मुर्गों का उपयोग कई पीढ़ियों तक किया जा सकता है जबकि प्राकृतिक संभोग के तहत उनका उपयोगी जीवन सीमित होता है।
3) मूल्यवान मुर्गों के पैर में चोट लगने पर भी कृत्रिम गर्भाधान के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।
4) तरजीही संभोग के कारण खराब प्रजनन क्षमता को एआई से समाप्त किया जा सकता है।
5) भारी मुर्गों के मामले में एआई उपयोगी तकनीक है।
6) हालांकि प्राकृतिक परिस्थितियों में क्रॉस ब्रीडिंग बहुत सफल होती है, लेकिन कभी–कभी कुछ मुर्गियां एक अलग रंग के नर के साथ तब तक संभोग नहीं करेंगी जब तक कि उन्हें एक साथ नहीं पाला गया हो। ऐसी स्थिति में एआई सफल क्रॉस ब्रीडिंग में मदद करती है।

पशुओं में यूरिया और क्रिएटिनिन के मान में उतार-चढ़ाव के शारीरिक एवं रोग सम्बन्धी कारण

शालिनी शर्मा, दिव्या अग्निहोत्री एवं अमित कुमार

पशु चिकित्सा फिजियोलॉजी व बायोकेमिस्ट्री विभाग एवं पशु चिकित्सा रोग निदान विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा

पशुओं में गुर्दे की समस्याओं का आंकलन करने के लिए रक्त में ब्लड यूरिया और क्रिएटिनिन की मात्रा की जांच की जाती है। ब्लड यूरिया और क्रिएटिनिन की मात्रा सामान्य सीमा के भीतर रहते हैं जब तक कि 50% से अधिक गुर्दे का कार्य नष्ट नहीं हो जाता। यदि इनकी मात्रा किसी प्रजाति के निश्चित मापदंड से अधिक या कम होती है तो इसके कारणों की जांच करना आवश्यक है ताकि समय रहते पशु का उचित इलाज किया जा सके।

पशुओं में गुर्दे की बीमारी के लक्षण इस प्रकार हैं –

- वजन घटना।
- उल्टी।
- मसूड़ों का पीला पड़ना।
- जानवर की सांस से केमिकल जैसी गंध आना।
- मूत्र की मात्रा में वृद्धि या कमी।
- मुंह में छाले।
- सुस्ती।
- भूख में उल्लेखनीय कमी।
- पानी के सेवन में वृद्धि या कमी।

गुर्दे की बीमारी के सभी चरणों में, क्रिएटिनिन, बीयूएन की तुलना में गुर्दे के कार्य का एक अधिक विश्वसनीय संकेतक है क्योंकि बीयूएन की गुर्दे के कार्य से संबंधित आहार और शारीरिक स्थितियों से प्रभावित होने की अधिक संभावना है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि बीयूएन से क्रिएटिनिन का 10 से 1 अनुपात मध्यम से उन्नत गुर्दे की बीमारी का संकेत देता है। कम बीयूएन/क्रिएटिनिन अनुपात अपर्याप्त प्रोटीन सेवन, उन्नत यकृत रोग की तरह यूरिया संश्लेषण में कमी, सिकल सेल एनीमिया के रूप में यूरिया का अलौकिक उत्सर्जन, रेबडोमायोलिसिस के रूप में क्रिएटिनिन उत्पादन में वृद्धि, या डायलिसिस के दौरान क्रिएटिनिन की तुलना में यूरिया के अधिक प्रभावी निष्कासन का सुझाव देता है।

*Corresponding author: shalinisharma12_vet@yahoo.co.in

निश्चित मापदंड से अधिक ब्लड यूरिया निम्नलिखित कारणों से हो सकता है –

- अधिक प्रोटीन युक्त भोजन का सेवन
- जठरांत्र में हेमरेज
- अत्यधिक चयापचय (जैसे बुखार आने पर, इंफेक्शन, भुखमरी/भोजन न मिलने पर)
- विभिन्न दवाइयों (जैसे ग्लुकोकोर्टिकॉइड्स, ऐजाथायोप्रीन, टेट्रासाइक्लिन) का सेवन
- गुर्दे सम्बन्धी रोग
- गुर्दे में रक्त प्रवाह की कमी जैसे हाइपोटेंशन, शॉक इतियादी
- हार्ट फेलियर
- डिहाइड्रेशन
- यूरिनरी परफोरेशन (छिद्र)
- यूरिनरी सिस्टम में बाधा

निश्चित मापदंड से कम ब्लड यूरिया निम्नलिखित कारणों से हो सकता है –

- भोजन में प्रोटीन की कमी
- लिवर की समस्या–जहाँ यूरिया का निर्माण होता है।

गुर्दे की बीमारी की प्रगति में रक्त में क्रिएटिनिन, ब्लड यूरिया की मात्रा बढ़ने के बाद में बढ़ना प्रारम्भ होता हैं। यही कारण है की गुर्दे की बिमारी में बहुत सी परिस्थितियों में सामान्य से अधिक ब्लड यूरिया परन्तु लगभग सामान्य क्रिएटिनिन देखने को मिलता है। गुर्दे की बिमारी में ब्लड यूरिया और क्रिएटिनिन दोनों रक्त में सामान्य से अधिक बढ़ जाते हैं।

बड़ी नस्ल वाले कुत्तों में तथा कम उम्र के बछड़ों,

कुत्तों के रक्त में सामान्यतया क्रिएटिनिन की अधिक मात्रा पाई जाती है। कई दुर्लभ परिस्थितियों में रक्त में ब्लड यूरिया की मात्रा सामान्य किन्तु क्रिएटिनिन की मात्रा सामान्य मापदंड से अधिक पाई जाती है। ऐसे में रक्त की जांच नियमित रूप से करवानी चाहिए ताकि केवल क्रिएटिनिन के बढ़ने का कारण सुनिश्चित किया जा सके।

दवाइयों के प्रभाव से भी रक्त में क्रिएटिनिन की मात्रा का उतार चढ़ाव होता है जैसे ग्लुकोकोर्टिकॉइड्स देने पर घटना एवम फुरोसीमाईड और सल्फा ड्रग्स देने पर इसकी मात्रा रक्त में बढ़ जाती है।

यदि पशु को अधिक समय के लिए जल से वंचित रखा जाए तब ऐसे परिस्थिति में भी क्रिएटिनिन की मात्रा रक्त में बढ़ सकती है।

इस प्रकार, ब्लड यूरिया और क्रिएटिनिन, एक साथ, गुर्दे की बीमारी के मूल्यांकन में मूल्यवान जांच परीक्षण हैं। हालांकि वे किसी भी समय गुर्दे के कार्य के पूर्ण संकेतक के रूप में कम पड़ सकते हैं, वे गुर्दे की बीमारी की प्रगति के महत्वपूर्ण संकेतक हैं।

भेड़-बकरियों में मुख्य जीवाणुजनित रोग एवं उनकी रोकथाम

रिक्की झाँभ, जय भगवान और युधवीर सिंह

पशु औषधि विज्ञान विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

भेड़ बकरियों में होने वाले मुख्य जीवाणुजनित रोगों का विवरण व उनकी रोकथाम के उपाय इस प्रकार हैं–

1- vkr fo"kkDrk ¼,UVsjksVkfDlfe;k½

dkj.k& यह रोग भेड़ बकरियों में क्लोस्ट्रिडियम परफ्रिन्जेन्स टाईप डी नामक जीवाणु द्वारा आंतड़ियों में उत्पन्न विषाक्तता है। यह जीवाणु प्रायः इन पशुओं की आंतड़ियों में थोड़ी मात्रा में विद्यमान रहता है। आहार में अचानक बदलाव जैसे अधिक मात्रा में दाना या अधिक शर्करायुक्त आहार इस रोग के पनपने में सहायक है। यह रोग प्रायः 3–10 सप्ताह के दूध पीते मेमनों में सर्वाधिक होता है हालांकि दूध छुड़ाये मेमनों में यह रोग 10 माह की आयु तक होने की संभावना अधिक है। व्यस्क भेड़–बकरियों में यह रोग भारी मात्रा में फीताकृमि संक्रमण के साथ हो सकता है।

jksx ds y{k.k& मेमनों में बिना किसी लक्षण के आकस्मक मृत्यु होने लगती है। कम गंभीर अवस्था में हरे पेस्टी दस्त होना, मुंह से झाग आना, शरीर में ऐंठन, पैर मारना, पषु का जमीन पर लेट जाना इत्यादि रोग के मुख्य लक्षण हैं। व्यस्क भेड़ों में रोग की अवधि 24 घंटे तक की हो सकती हैं जिस दौरान पशु में लार पड़ना, जबड़े का किटकिटाना, अंतिम अवस्था में अफारा आना, झूल के चलना, मांसपेशियों में कंपन, दौरे पड़ना आदि लक्षण दिखाई देते हैं। बकरियों में रोग के मुख्य लक्षणों में तीव्र पेट दर्द होना, खूनी दस्त, शरीर में ऐंठन आदि प्रमुख हैं।

jksdFkke& इस रोग की रोकथाम के लिए टीका उपलब्ध है। पशुओं में पहला टीका चार माह की आयु में लगाया जाता है, तत्पश्चात् प्रतिवर्ष टीका लगवाएं। पशुओं के आहार में अचानक परिवर्तन नहीं करना चाहिए और ना ही अधिक मात्रा में आहार देना चाहिए।

2- /kuq"Vadkj ¼fVVsul½

dkj.k& यह पशुओं में होने वाला प्राण घातक रोग है जो कि क्लोस्ट्रिडियम टिटेनाई नामक जीवाणु से उत्पन्न विष, टेटेनोस्पास्मिन के कारण होता है। यह विष मांसपेशियों में ऐंठन पैदा करता है। भेड़ बकरियों में यह रोग बंधियाकरण, मशीनों द्वारा ऊन काटना, पूंछ काटना या टीकाकरण द्वारा उत्पन्न चोट के संक्रमण के कारण होता है। मेमनों में यह रोग सर्वाधिक होता है।

jksx ds y{k.k& भेड़ बकरियों में मांसपेशियों में खिंचाव के कारण उनका शरीर लकड़ी की तरह अकड़ जाता है जिस कारण पशु जमीन पर गिर जाता है। पशु की तीसरी पलक उभर जाती है। पशु के जबड़ों में जकड़न देखी जा सकती है जिससे पशु को खाने में कठिनाई आती है।

jksdFkke& भेड़–बकरियों में टीकाकरण या अन्य ऑपरेशन करते समय साफ–सफाई का विशेष ध्यान रखें एवं किसी तरह का घाव होने पर हाईड्रोजन परऑक्साइड से उपचार करें। यदि समस्या अधिक है तो ऑपरेशन के समय टिटेनस एंटीटोक्सिन लगाया जा सकता है। साथ ही में टिटेनस का टीका अवश्य लगवायें।

3- czwlsyrk ¼czwlsyksfll½

dkj.k& भेड़–बकिरियों में यह रोग ब्रूसेल्ला मेलिटेन्सिस या ब्रूसेल्ला ऑविस नामक जीवाणु के कारण होता है। यह रोग प्रायः रोगी पशु के झुंड में सम्मिलित होने से होता हैं जो कि योनि स्राव के द्वारा वातावरण को प्रदूषित करता है। स्वस्थ पशु में यह रोग प्रायः प्रदूषित आहार खाने के कारण होता है। मेमनों द्वारा रोगी पशु का दूध पीने से भी यह रोग हो सकता है। इसके अतिरिक्त व्यसक रोगी मेंढों द्वारा ब्रूसेल्ला ऑविस जीवाणु का प्रसारण स्वस्थ पशुओं में सीधे संपर्क या सहवास द्वारा होता है।

jksx ds y{k.k& भेड़–बकरियों में गर्भ के अंतिम पड़ाव में गर्भपात होना, जेर का अटकना, कमजोर मेमनों का पैदा होना, इस रोग की संभावना व्यक्त करते हैं। प्रभावित मेंढ़ों

*Corresponding author: jhambricky@gmail.com

में वृषण (अंड) का सूजना व बड़ा होना एवं छूने पर दर्द होना, इस रोग को दर्शाते हैं जिससे कि पशु स्थाई रूप से प्रजनन के लिए बेकार हो जाता है।

jksdFkke& गर्भपात हुए बच्चे, जेर एवं योनि से स्राव का समुचित निस्तारण करें एवं बाड़े को विसंक्रमित करें जिसके लिए 2.5 प्रतिशत सोडियम हाइपोक्लोराइट, 20 प्रतिशत कास्टिक चूना या 2 प्रतिशत फोरमेल्डिहाइड का इस्तेमाल करें। स्वस्थ पशुओं में बीमारी से बचाव के लिए 4–6 माह की आयु में ब्रूसेल्ला मेलिटेन्सिस रेव–1 का टीकाकरण करवाया जा सकता है।

4- laØked cdjh QqQ lkj.k fuekfu;k ¼dUVft;l dsijkbu lijkU;ekfu;k½

dkj.k& यह बकरियों में होने वाला श्वसन संबंधी प्राण घातक रोग है जो कि माइकोप्लाज्मा कैप्रीकोलम प्रजाति कैप्रीन्यूमोनिए के कारण होता है हालांकि भेड़ों में भी यह रोग हो सकता है। यह रोग मुख्य रूप से सांस द्वारा फैलता है।

jksx ds y{k.k& प्रभावित पशुओं में तीव्र खांसी आना, सांस लेने में कठिनाई होना, बुखार आना, चलते–चलते झुंड में पीछे रह जाना या लेट जाना आदि रोग के प्रमुख लक्ष्ण है। साथ में मुंह खोल कर सांस लेना, जीभ को बाहर निकालना, झागदर लार पड़ना एवं दो या अधिक दिनों में पशु की मृत्यु होना स्वाभाविक है।

jksdFkke& सख्त स्वच्छता उपाय अपनाने चाहिए एवं संक्रमित पशुओं को अलग रखना चाहिए। रोग से बचाव के लिए 3 माह की आयु में टीकाकरण किया जाता है जो कि एक माह के अंतराल पर दोबारा लगाया जाता है। तत्पश्चात् प्रतिवर्ष टीकाकरण की सलाह दी जाती है।

5- [kqj xyu ¼QqV jkWV½

dkj.k& यह भेड़ बकरियों में खुरों को प्रभावित करने वाला अति संक्रमित रोग है जो कि इन पशुओं में लंगडेपन का मुख्य कारण है। यह रोग प्राय खुरों को संक्रमित करने वाले बहुत से जीवाणुओं जिनमें कि डाइकेलोबेक्टर नोडोसस मुख्य घटक है, के कारण होता है। इन जीवाणुओं का संक्रमण प्रायः अधिक समय तक गीले वातावरण में खुरों के गलने से होता है।

jksx ds y{k.k& खुरों के बीच की त्वचा में सूजन, शोथ एवं जलन इस रोग के शुरूआती लक्षण हैं। रोग से प्रभावित पशु लंगड़ापन दर्शाता है। अति गंभीर अवस्था में खुर की त्वचा अलग होने लगती है एवं खुरों के बीच के उत्तकों में मवाद पड़ जाता हैं जिससे कि बदबू आने लगती है। रोग के पुराने होने की अवस्था में खुर बढ़ जाते हैं एवं उनका आकार बदल जाता है जिससे कि पशु को चलने में अधिक कठिनाई होती है।

jksdFkke& केवल उन्हीं पशुओं के खुरों की सावधानीपूर्वक ट्रीमिंग करें जिनके कि आकार बदले हुए हैं। रोग के बचाव के लिए एंटीसेप्टिक फुट बाथ जिसमें कि 10–20 प्रतिशत जिंक सल्फेट, 5–10 प्रतिशत कापर सल्फेट एवं 3–5 प्रतिशत फोरमेलिन, का इस्तेमाल खुरों को धोने के लिए किया जा सकता है। लंगड़े पशु का तुरन्त ईलाज करें एवं अन्य पशुओं से अलग रखें।

औषधीय पौधों का कुक्कुट पालन में महत्त्व

अमनदीप, दिपिन चंद्र यादव और देवेंद्र सिंह बिढाण

पशु उत्पादन प्रबंधन विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

प्राचीनकाल से औशधीय पौधे एवं उनके विभिन्न भाग कुक्कुट उत्पादन के लिए दवा का एक अनिवार्य स्रोत रहे है। यद्यपि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान काफी हद तक विकसित हो चुका है किन्तु भारत में अब भी काफी किसान कुक्कुट स्वास्थ्य प्रबंधन के लिए पौधों के हिस्सों और हर्बल उपचार पर निर्भर हैं। दुर्भाग्य से स्थानीय चिकित्सा परंपराएं खो रही हैं क्योंकि उन्हें पीढ़ी से पीढ़ी तक मौखिक रूप से संप्रेषित किया जाता है और बड़े पैमाने पर अनिर्दिष्ट हैं।

पोल्ट्री फीड में एंटीबायोटिक ग्रोथ प्रमोटर्स (एजीपी) के उपयोग पर हालिया प्रतिबंध ने औषधीय पौधों के प्रति शोधकर्ताओं को आकर्षित किया है। ऋग्वेद में भी मनुष्य और जानवरों के उपचार में औषधीय पौधों के उपयोग को निर्दिष्ट किया गया है। सहक्रियात्मक प्रभाव के लिए जड़ी–बूटियों का उपयोग मिश्रण के रूप में किया जाता है। औषधीय पौधों को इस धारणा के आधार पर उपयोग किया जाता है कि इनका मिश्रण स्वादिष्टता को बढ़ा सकता हैं। औषधीय पौधों में लाभकारी गुण होते हैं जैसे एंटी–ऑक्सीडेंट एंटी–माइक्रोबियल एंटी–फंगल रोग प्रतिरोधी क्षमता एंटीकोसिडियल आदि। विभिन्न प्रकार की औषधीय पौधों को पोल्ट्री के लिए प्राकृतिक फीड एडिटिव्स के रूप में उपयोग किया जाता है जैसे एलोवेरा, मेथी, अश्वगंधा, मोरिंगा ओलीफेरा, दालचीनी, तुलसी, लहसुन, काली मिर्च आदि। औषधीय पौधे न केवल पाचन प्रक्रिया में मदद करते है बल्कि प्रकृति का एक घटक होने के नाते ये सुरक्षित लागत प्रभावी और पर्यावरण के अनुकूल होते हैं। कुछ विशेष मिश्रणों को विशेष बीमारी को रोकने या उसका इलाज करने के लिए उपयोग किया जाता था। उदाहरण के लिए एलोवेरा को रानीखेत के उपचार के लिए प्रयोग में लिया जाता था। जैविक पोल्ट्री उत्पादन के लिए लोकप्रिय मांग और वैज्ञानिक महत्व को देखते हुए औषधीय पौधों का खिलाना हाल के वर्षों में काफी बढ़ गया है।

इसलिए पक्षी के प्रदर्शन को बढ़ाने के लिए उन्हें आहार में शामिल करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

औषधीय पौधों का उपयोग विभिन्न प्रकार से किया जाता है।

1- **,Vhck;kfVDl dk :i esa%** तैयार एंटीबायोटिक लागत को कम करने का एक तरीका औषधीय पौधों के एंटीबायोटिक गुणों का उपयोग करना है। किसी भी मामले में, इन हर्बल पेड़ों को ब्रॉयलर के लिए एंटीबायोटिक दवाओं के स्रोत के रूप में उपयोग करने की संभावना की जांच करने की आवश्यकता है। लिली एंटीबायोटिक दवाओं का एक अच्छा स्रोत हो सकता है और ब्रॉयलर के लिए आर्थिक रूप से निर्मित एंटीबायोटिक दवाओं का विकल्प हो सकता है। अदरक, जीरा, लौंग, लहसुन, काली मिर्च, धनिया, सरसों, दालचीनी, अजवायन, मेंहदी, अजवायन आदि में रोगाणुरोधी गतिविधियां पाई गयी हैं। लहसुन में विभिन्न जड़ी बूटियों और मसालों की तुलना में पाचन तंत्र में अधिक ठोस रोगाणुरोधी गतिविधियां होती हैं।

2- **,Vhv,DlhMsV xfrfof/k%** अदरक, सौंफ, धनिया, ग्रीन टी, काली मिर्च, अजवायन आदि में एंटीऑक्सिडेंट खंड होते हैं। इनमे से रोजमेरी और सेज में सबसे आष्चर्यजनक एंटीऑक्सीडेंट क्षमता है।

3- **ikpu'kfDr ij çHkko%** पौधे जैसे लौंग और दालचीनी आंतों की स्थिरता को कम करते हैं। ऋषि, अजवायन और मेंहदी के मिश्रण को ब्रॉयलर के खाने में एंटीबायोटिक के साथ पूरक खाने की दिनचर्या के

*Corresponding author: aghanghas1231@gmail.com

रूप में देखा जाता है।

4- fodkl dk c<kok nus okyh çHkkodkfjrk@ çn'kZu c<kus okyk प्रदर्शन बढ़ाने वाले घटकों का उपयोग पशु विकास दर को बढ़ाने के साथ–साथ एफसीआर को प्रोत्साहित करने के लिए किया जाता है। एंटीबायोटिक्स और कीमोथेराप्यूटिक दवाएं पशु उत्पादन में विशेष रूप से पोल्ट्री उत्पादन में प्रदर्शन बढ़ाने के लिए सबसे अधिक बार–बार उपयोग की जाती हैं। लेकिन अब, यह प्रदर्शित किया गया है कि एंटीबायोटिक्स आमतौर पर पोल्ट्री स्वास्थ्य के लिए ही नहीं बल्कि मानव स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक हैं।

निम्न औषधीय पौधे आजकल काफी उपयोग में लिए जा रहे हैं–

1. एलोवेरा उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय जलवायु में पाया जाता है। एलोवेरा का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा इसकी पत्ती है जो दो मुख्य वर्गों से बना हैः लेटेक्स और जेल। एलोवेरा के पत्तों में निहित जेल लगभग 98.5% से 99.5% पानी से बना होता है और शेष शुष्क पदार्थ में 75 से अधिक जैविक रूप से सक्रिय तत्व होते हैं। मुख्यतः जिनमें रोग प्रतिरोध क्षमता बढ़ाने वाले, सूजनरोधी, घाव भरने वाले, एंटी–वायरल, एंटी–फंगल, कैंसररोधी, मधुमेह विरोधी, और एंटीऑक्सीडेंट प्रभाव हैं।
2. मेथी के बीज रेतीली और जलोढ़ मिट्टी में प्राकृतिक रूप से उगते हैं और पूरी दुनिया में खेती की जाती है। मेथी बहु–कार्यात्मक विशेषताओं वाली जड़ी–बूटियों में से एक है। मेथी का उपयोग क्षुधावर्धक के रूप में भी किया जाता है। पहले, यह भी बताया गया है कि इसमें रोगाणुरोधी, हाइपोग्लाइसेमिक, हाइपोलिपिडेमिक, हाइपोकोलेस्टोरेमिक और एंटीऑक्सिडेंट प्रभाव होते हैं।

3. अश्वगंधा की जड़, पत्ते और बीज लंबे समय से भारत में पारंपरिक चिकित्सा में उपयोग किए जाते हैं। इसमें रोग प्रतिरोध क्षमता बढ़ाने वाले, एंटीऑक्सिडेंट, हेपेटोप्रोटेक्टिव और जीवाणुरोधी प्रभाव होते हैं।
4. मोरिंगा के पत्तों में प्रीबायोटिक प्रभाव और एंटीऑक्सिडेंट फाइटोकेमिकल्स जैसे क्लोरोजेनिक एसिड और कैफिक एसिड पाए जाते हैं। मोरिंगा लीफ मील एंटीऑक्सीडेंट यौगिकों का एक अच्छा स्रोत है।
5. प्राकृतिक वृद्धि को बढ़ावा देने वाले लहसुन और अदरक कृत्रिम विकास प्रवर्तकों के लिए संभावित विकल्प हो सकते हैं। अदरक का अर्क फ्री रैडिकल्स की मात्रा और लिपिड के पेरोक्सीडेशन को नियंत्रित कर सकता है और इसमें मधुमेह विरोधी गुण होते हैं। लहसुन में जीवाणुरोधी, एंटीफंगल, परजीवी विरोधी, एंटीवायरल, एंटीऑक्सीडेंट, एंटीकोलेस्टेरेमिक, कैंसररोधी और वासोडिलेटर गुण होते हैं।

बायपास प्रोटीन और डेयरी पशुओं में इसका अनुप्रयोग

संदीप कुमार*, अनुज सिंह एवं रामस्वरूप
पीएच.डी. शोध छात्र, पशु पोषण विभाग, पशु चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

दुग्ध उत्पादन के मामले में भारत दुनिया में सबसे आगे है। वार्षिक दूध उत्पादन 187.7 MT है जबकि प्रति व्यक्ति उपलब्धता केवल 394 ग्राम है। दुनिया की सबसे अच्छी भैंस की नस्लें भारत में पाई जाती हैं जो राष्ट्रीय दूध पूल में 52 प्रतिशत के प्रमुख योगदानकर्ता हैं। दूध की प्रति व्यक्ति उपलब्धता की तुलना करने पर भारत अमेरिका, इजराइल जैसे विकसित देशों से काफी पीछे है। वैसे तो भारत में सबसे ज्यादा भैंस हैं, लेकिन प्रति पशु दूध का उत्पादन बहुत कम है। इसका कारण देशी नस्लों की कम उत्पादन क्षमता भी अपनी अधिकतम क्षमता तक पहुंचने में विफल रही। क्रॉसब्रीडिंग प्रोग्राम ने देश में दुग्ध उत्पादन को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। लेकिन फिर भी, इन पशुओं को अधिक देखभाल, बेहतर आहार और पर्यावरण से बेहतर सुरक्षा की आवश्यकता है।

प्रोटीन, मवेशियों और भैंसों के राशन में एक महत्वपूर्ण घटक, जब प्रोटीन जुगाली करने वाले पशुओं को खिलाया जाता है, तो रूमेन रोगाणुओं द्वारा अमोनिया, अमीनो एसिड और पेप्टाइड्स में अवक्रमित हो जाता है। इसके बाद, इन अपघटनीय उत्पादों का उपयोग जीवाणुओं द्वारा माइक्रोबियल प्रोटीन संश्लेषण के लिए किया जाता है, लेकिन यह प्रक्रिया हमेशा कुशल नहीं हो सकती है। इसके अलावा, खली के क्षरण से उत्पन्न अतिरिक्त अमोनिया, रूमेन की दीवार से अवशोषण के बाद यकृत में ले जाया जाता है, यूरिया में परिवर्तित हो जाता है और मूत्र के माध्यम से बाहर निकल जाता है। यह केवल आहार प्रोटीन की बर्बादी है, साथ ही यूरिया संश्लेषण पर खर्च किए जाने वाले पशुओं की ऊर्जा पर कर लगाना है। यद्यपि सूक्ष्मजैविक प्रोटीन एक अच्छी गुणवत्ता वाला प्रोटीन है, परंतु यह उच्च दूध देने वाले पशुओं की आवश्यकता को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकता है। इसलिए जुगाली करने वालों को ऐसे प्रोटीन भी दिए जा सकते हैं, जो आंतों में अवक्रमित होते हैं और अमीनो एसिड के रूप में अवशोषित होते हैं। इस प्रकार, उच्च उपज देने वाले जानवरों की पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, रूमेन संरक्षित प्रोटीन जैसी फीड तकनीकों को अपनाया जा सकता है क्योंकि इसने न केवल दूध की पैदावार में वृद्धि की है, बल्कि विकास और प्रजनन में भी सुधार किया है।

अधिक उत्पादन देने वाले पशुओं में, विशेष रूप से शुरूआती स्तनपान के दौरान दूध के रूप में किया गया उत्पादन पशु को दिए गए पोषण से अधिक होता है। असंतुलन के कई कारण हैं, एक है कम भूख लगना जिसके परिणामस्वरूप प्रसव के बाद कम शुष्क पदार्थ का सेवन होता है जबकि प्रारंभिक स्तनपान के दौरान प्रोटीन और ऊर्जा की आवश्यकता अधिक होती है। परिणामस्वरूप पशु शरीर में आरक्षित पोषण को उपयोग में लाता है जिसकी वजह से वजन कम होता है और अंत में दूध उत्पादन में कमी आती है। आहार में उच्च प्रोटीन की आपूर्ति ही एकमात्र समाधान नहीं है क्योंकि जीवाणुओं द्वारा रूमेन में प्रोटीन का टूटना होता है। इसलिए इसकी जरूरतों को पूरा करने के लिए बाइपास प्रोटीन की आपूर्ति एक अच्छा विकल्प हो सकता है।

ckblik l ikVhu d ykHk

1. फीड की प्रति यूनिट में अमीनो एसिड की उच्च उपलब्धता।
2. उच्च रूमेन प्रोटीन अवक्रमण वाले प्रोटीन भोजन का बेहतर उपयोग।
3. सीमित मात्रा में उपलब्ध प्रोटीन भोजन का विवेकपूर्ण उपयोग।

*Corresponding author: d

4. वृद्धि और दूध उतपादन में सुधार करता है।
5. दूध में प्रोटीन प्रतिशत में सुधार करता है।
6. दूध में वसा प्रतिशत में सुधार करता है।
7. समान इनुपट लागत के लिए बेहतर आर्थिक रिटर्न।
8. कम और अधिक उपज देने वाले जानवरों के लिए उपयोगी, भारतीय परिस्थितियों के लिए भोजन और प्रबंधन के लिए प्रासंगिक।

Wali (2002) ने बाईपास प्रोटीन पर अपनी समीक्षा में बताया कि दुधारू पशुओं के आहार में बाइपास प्रोटीन को शामिल करने से विकासशील देशों में दूध उत्पादन में वृद्धि की काफी संभावनाएं हैं। Komagiri and Eradman (1992) ने बताया कि एच.एफ. गायों में दूध उत्पादन में वृद्धि हुई थी, जब उन्हें अधिक मात्रा में रूमेन अडिग्रेडेबल प्रोटीन खिलाया गया। नकारात्मक ऊर्जा संतुलन के कारण, डेयरी गायें लंबी सेवा अवधि दिखा सकती हैं क्योंकि वे पोषण संबंधी बांझपन से पीड़ित हैं। कुछ प्राकृतिक खाद्य पदार्थों में कुछ हद तक रूमेन सुरक्षा होती है।

बायपास प्रोटीन उच्च उत्पादन वाले पशुओं की आवश्यकताओं को पूरा करने का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है, लेकिन बेहतर परिणाम तब प्राप्त किए जा सकते हैं जब आहार प्रोटीन में डिग्रेडेबल प्रोटीन और बाईपास प्रोटीन को 40:60 के अनुपात में दिया जा सके। रूमेन में प्रोटीन की अवक्रमणीयता को रोकने के लिए प्रोटीन स्त्रोतों को इस तरह से कृत्रिम रूप से उपचार किया जाता है जिससे कि रूमेन जीवाणुओं को प्रोटीन की कम उपलब्धता हो सके। सबसे आसान और सबसे आम तरीका ऊष्मा और फॉर्मलाडेहाइड उपचार है। गुलाटी एट अल (2001) के अनुसार डेयरी गाय के लिए बाईपास प्रोटीन की खुराक में उच्च स्तर का क्रूड प्रोटीन, अनुकूलतम आवश्यक अमीनो एसिड प्रोफाइल, 60–70 प्रतिशत अडिग्रेडेबल प्रोटीन होना चाहिए जिसकी छोटी आंतों में लगभग 80 प्रतिशत पाचन क्षमता हो।

जैसा कि पहले चर्चा की गई है, फीड की कुछ हद तक प्राकृतिक सुरक्षा है। इसके अलावा, प्रोटीन को निम्नलिखित तरीकों से कृत्रिम रूप से रूमेन क्षरण से बचाया जा सकता है।

d½ jklk;fud mipkj

प्रोटीन को रासायनिक रूप से टैनिन, फॉर्मलाडेहाइड, ग्लूटाराल्डिहाइड, ग्लाइऑक्सल और हेक्सा–मेथिलनेटेट्रामाइन जैसे पदार्थों के साथ उपचार करके संरक्षित किया जा सकता है लेकिन फॉर्मलाडेहाइड उपचार का सबसे अधिक उपयोग किया जाता है। तिलहन भोजन, घास और साइलेज में बाइपास प्रोटीन में सुधार करने के लिए फॉर्मलडिहाइड उपचार प्रभावी पाया गया है। 0.5–1.5, 1–3 व 3–5 प्रतिशत फॉर्मलाडेहाइड का उपयोग क्रमशः दाना, घास और साइलेज में प्रोटीन संरक्षण के लिए किया जाता है। फॉर्मलाडेहाइड उपचार न केवल फीड सामग्री में रूमेन अडिग्रेडेबल प्रोटीन को बढ़ाता है बल्कि जानवरों द्वारा इसकी स्वीकार्यता को भी बढ़ाता है। फॉर्मलाडेहाइड के साथ प्रोटीन भोजन का इलाज करने के लिए निम्नलिखित फायदे हैं:

1. प्रोटीन संरक्षण का वांछित स्तर प्राप्त किया जा सकता है।
2. प्रोटीन के कम और अधिक संरक्षण को समाप्त किया जा सकता है।
3. आवश्यक अमीनो एसिड की जैव उपलब्धता को अधिकतम किया जा सकता है।
4. यह ADIN और HCHO सामग्री के अनुपात में वृद्धि नहीं करता है।
5. किफायती।
6. मूंगफली की खली का HCHO उपचार कवक के आगे विकास को और मायकोटॉक्सिन के उत्पादन को रोकता है।

[k½ Å"ek mipkj

यह इस सिद्धांत पर काम करता है कि ऊष्मा उपचार प्रोटीन के विकृतिकरण का कारण बनता है जो माइक्रोबियल हमले के खिलाफ प्रभावी सुरक्षा प्रदान करता है। उच्च तापमान पर ऊष्मा उपचार से कुछ अमीनो एसिड जैसे सिस्टीन, आर्जिनिन की उपलब्धता कम हो जाती है, इसलिए इस तरह के नुकसान को कम करने के लिए ऊष्मा उपचार उपयोगी पाया गया है। ऊष्मा उपचार प्रोटीन की बायपासबिलिटी और पाचनशक्ति दोनों को बढ़ाता है।

हालांकि, ऊष्मा उपचार बहुत महंगा है और आर्थिक रूप से व्यवहार्य नहीं है।

fu"d"k

अधिक उपज देने वाले दुधारू पशुओं को उच्च पोषण की आवश्यकता होती है। प्रारंभिक स्तनपान के दौरान, यदि आहार का सेवन दूध उत्पादन से कम है, तो वे नकारात्मक ऊर्जा संतुलन तक पहुंच सकते हैं। इन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बायपास प्रोटीन खिलाना सर्वोत्तम तरीकों में से एक है। चूंकि यह रूमेन के क्षरण से बचने के लिए सीधे छोटी आंतों तक पहुंचता है और जानवरों की उच्च प्रोटीन मांगों को पूरा करने के लिए उपलब्ध होता है। बाईपास प्रोटीन सामान्य प्रजनन क्षमता को बनाए रखने में भी मदद करेगा। इसलिए, किसानों को सलाह दी जाती है कि वे अधिक से अधिक लाभ के लिए उल्लिखित आहार रणनीति अपनाएं।

एन.डी.डी.बी. और एन.डी.आर.आई. करनाल द्वारा संयुक्त रूप से बाईपास प्रोटीन पर किए गए एक सहयोगी परीक्षण से बहुत उत्साहजनक परिणाम प्राप्त करने के बाद, एन.डी.डी.बी. ने एक दशक से अधिक समय पहले बाईपास प्रोटीन का व्यावसायिक निर्माण शुरू किया था। आज, वे लाखों डेयरी किसानों को प्रतिदिन बाईपास प्रोटीन की आपूर्ति कर रहे हैं। पूरे देश में अब तक, एक भी किसान ने इस तकनीक के किसी भी प्रतिकूल प्रभाव की सूचना नहीं दी है यानी बाइपास प्रोटीन खिलाना पूरी तरह सुरक्षित है।

FORM IV

Statement about ownership and other particulars about Pashudhan Gyan Magazine to be published in the first issue every year after the last day of February.

1.	Place of publication	:	Hisar (Haryana)
2.	Periodicity of its publication	:	Half Yearly
3.	Printer's Name	:	Dorex Offset Printers
	Nationality	:	Indian
	Address	:	Satya Nagar, D.N. College Road, Behind Swastik Gas Godown, Hisar
4.	Publisher's Name	:	Dr. Dharamvir Dahiya
	Nationality	:	Indian
	Address	:	Directorate of Extension Education, Lala Lajpat Rai University of Veterinary and Animal Sciences, Hisar-125 004 (Haryana)
5.	Editor's Name	:	Dr. Davinder Singh
	Nationality	:	Indian
	Address	:	Directorate of Extension Education, Lala Lajpat Rai University of Veterinary and Animal Sciences, Hisar-125 004 (Haryana)

6. Names and addresses of individuals who own the newspaper

LALA LAJPAT RAI PASHU CHIKITSA EVAM PASHU VIGYAN VISHV VIDHYALAY

I, Dr. Dharamvir Dahiya hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

(Dharamvir Dahiya)

बकरियों को होने वाले मुख्य रोग, उनकी पहचान एवं उपचार कैसे करें?

अनुज सिंह, सन्दीप कुमार एवं रामस्वरूप
पशु पोषण विभाग, पशु चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय
लाला लाजापत राय पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार, (हरियाणा)

बकरियों को होने वाले रोग, उनके लक्षण एवं उपचार बकरी जिसे गरीबों की गाय भी कहा जाता है, किसानों के लिए आय बढ़ाने का अच्छा जरिया है। सामान्यतः बकरी पालन में बहुत कम खर्च आता है परन्तु यदि बकरियों को रोग लग जाए तो वह आपके लिए मुसीबत का कारण हो सकता है। इसलिए किसान समाधान आज आपके लिए बकरियों को सामान्यतः लगने वाले रोग एवं उनकी पहचान आप किस तरह करें व उसका उपचार किस तरह कर सकते हैं।

fuekfu;k d; y{k.k%&

यदि आपकी बकरी में इस तरह के लक्षण जैसे– ठण्ड से कँपकपी, नाक से तरल पदार्थ का रिसाव, मुँह खोलकर साँस लेना एवं खाँसी बुखार जैसी चीजें दिखाई दें तो समझ लें बकरी को निमोनिया रोग है।

fuekfu;k d; cpko ,oa mipkj%&

शीत ऋतु अर्थात् ठण्ड के मौसम में बकरियों को छत वाले बाड़े में रखें। एंटीबायोटिक 3 से 5 मि.ली., 3–5 दिन तक खाँसी के लिए केफलोन पाउडर 6–12 ग्राम प्रतिदिन 3 दिन तक दें।

vkQjk d; y{k.k%&

यदि आप की बकरी में इस तरह के लक्षण जैसें– पेट का बयां हिस्सा फूल जाए व दबाने पर डोल की तरह बजे अथवा पेटदर्द, पेट पर पैर मारने लगे और साथ ही सांस लेने में तकलीफ हो तब आफरा रोग हो सकता है।

vkQjk d; cpko ,oa mipkj%&

चारा व पानी तुरन्त बंद कर दें, 1 चम्मच खाने का सोडा या टिम्पोल पाउडर 15–20 ग्राम, 1 चम्मच तारपीन का तेल व 150–200 मि.ली. मीठा तेल पिलायें।

vkjQ@eqg d; y{k.k%&

यदि आप की बकरी में इस तरह के लक्षण जैसे– खूब सारे छाले होठों व मुँह की श्लेश्मा पर या कभी–कभी खुरों पर भी हो सकते हैं जिससे पशु लंगडा कर चलता है।

vkjQ@eqg d; cpko ,oa mipkj%&

मुँह को दिन में दो बार लाल दवा/फिनाइल/डेटोल आदि के हल्के घोल से धोएं, खुरों तथा मुंह पर लोरेक्सन या बीटाडीन लगायें।

eqgidk&[kqjidk d; y{k.k%&

यदि आप की बकरी में इस तरह के लक्षण जैसे– मुँह व पैरों में छाले जो घाव में बदल जाते हैं, अत्यधिक लार निकलना एवं पशु का लंगड़ाकर चलना, बुखार आना एवं दूध की मात्रा में एकदम से गिरावट आ जाती है।

eqgidk&[kqjidk d; cpko ,oa y{k.k%&

जिन बकरियों में यह लक्षण दिखाई दें उन्हें तुरन्त अन्य बकरियों से अलग कर पैरों व मुँह के घावों को लाल दवा/डेटोल के हल्के घोल से धोएं व बाद में लोरेक्सन/चर्मिल लगायें। एंटीबायोटेक व बुखार का टीका (मेलोनेक्स/वेताल्जिन 5 मिली) लगवाएं। यह भी पढ़े यदि आपके पशु ने कीटनाशक खा लिया है तो उसका उपचार इस तरह करें, दस्त (छैर) लक्षणः यदि आपकी बकरी में इस तरह के लक्षण, जैसे– थोड़े–थोड़े अन्तराल में मल का निकलना एवं बकरी में कमजोरी आना बचाव एवं उपचार, नेबलोन पाउडर 15–20 ग्राम 3 दिन तक। यदि दस्त में खून भी आ रहा है तो वोक्तरिन आधी गोली सुबह एवं शाम नेबलोन पाउडर के साथ या पाबाडीन गोली दें।

Fkuyk jksx d; y{k.k%&

यदि आपकी बकरी में इस तरह के लक्षण जैसे– थनों में सूजन आ जाये या दूध में फटे दूध के थक्के या बुखार भी हो सकता है।

Fkuyk jksx d; cpko ,oa mipkj%&

साफ–सफाई का ध्यान रखें एवं एंटीबायोटिक को थनों में इंजेक्शन के साथ डाल दें या पेंदेस्तरिन ट्यूब एक थन में एक पूरी डालें व 3 से 5 दिनों तक ऐसा करें।

*Corresponding author: d

प्रकाशक:

डॉ. धर्मवीर सिंह दहिया

निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय

हिसार–125004 (हरियाणा)

सम्पादक:

डॉ. देवेन्द्र सिंह

सम्पादकीय मण्डल:

डॉ. वन्दना भनोट

डॉ. दिपिन चन्द्र यादव

डॉ. राजेश कुमार

प्रकाशक: डॉ. धर्मवीर सिंह दहिया, निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय, लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार ने डॉ. देवेन्द्र सिंह के संपादन में **डोरेक्स ऑफसैट प्रिन्टर्स, हिसार** से लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार के लिए मुद्रित करवा कर जनवरी, 2022 को प्रकाशित किया।

निर्देश: इस पत्रिका में प्रकाशित सामग्री वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है तथा लेखकों द्वारा पाठकों की जानकारी के लिए प्रस्तुत की गई हैं। सम्पादक, प्रकाशक व मुद्रक तथा लेखकों के द्वारा दी गई जानकारी के लिए उत्तरदायी नहीं हैं। ब्राँडेड दवाइयों व उत्पादों के नाम केवल उदाहरण के रूप में दिए हैं तथा इन्हें विश्वविद्यालय की ओर से सिफारिश न माना जाए। पाठकों को यह सलाह दी जाती है कि किसी भी जानकारी को प्रयोग में लाते समय विशेषज्ञों की सलाह लें। किसी भी त्रुटि के लिए सम्पादक से सम्पर्क किया जा सकता है। सभी विवादों का न्यायक्षेत्र हिसार न्यायालय होगा।

दूधारू पशुओं में दूध उतारने, दूध बढ़ाने व
दूध का फैट बढ़ाने और अच्छे पावस के लिए
सर्वोत्तम औषधि

एल डी एम

एल डी एम पिलायें, पवसाने वाले टीके से छुटकारा पाएं और पूरा दूध पाएं!

देने की विधि :

100 मि.ली. सुबह 100 मि.ली. शाम को रोजाना
दूध निकालने से आधा घंटा पहले पशु को दीजिए ।

उपलब्धता :
1, 3 व 10 लीटर

सभी मेडीकल स्टोर व Online Flipkart, Amazon पर उपलब्ध

AHC
Animax Health Care Pvt. Ltd.

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें
8059537000, 9869657711
www.animaxhealthcare.in